॥ श्री जिनाय नमः । श्री सद्गुरुभ्यो नमः ॥

॥ प्रस्तावना ॥

इस संसार रूप महा अरण्य में अनादि काल से जीव श्री जिन प्ररूपित मार्ग से विमुख होके कुगुरु हीणाचारियों की संगति से कुमार्ग अङ्गीकार कर परिभ्रमण कर रहा है, नरक निगोदादि के अनन्तानन्त दुःखो का उपभोगी हो अपने पवित्रात्मा को पाप कर्मरूप अशुचि से अपवित्र करता है, ज्ञान दर्शन चारित्रादि निज गुणों को विसार पञ्च इन्द्रियों की विषय विकारों में लिप्त होके उन्हें ही अपना कर्त्तव्य समझ रहा है, जैसे कोई मनुष्य मदिरापान के नशे में पागल होके अपने अच्छे अच्छे प्रसादों की सुख शय्या को छोड़ महा दुर्गन्ध भूमि को ही सुख शय्या समझ किसी चतुर पुरुष का कहना न मान वहीं लौटना अपना परम कर्त्तव्य जानता है। वैसे ही जीव मोह मिथ्यात्व मयी नशे की मतवाल में मतवाला बन जिन कथित सुख शय्या को छोड इन्द्रियों के काम भोगादि शय्या को ही सुख शय्या जान उस ही में रङ्गरत्ता रहना अत्यावश्यकीय कार्य्य समझता है, यदि सच्चा और स्वच्छ वीर मार्ग में चलनेवाले महाऋषि शुद्ध निःस्नेही मोक्ष मार्ग बतावे तो उल्टी उन्हीं महात्माओं की न मान कर उन निरारम्भी निष्परिग्रहों की निन्दा करने को तत्पर बने रहते हैं, किन्तु जिन कथित मार्ग क्या है इस को पहचान ने की कोशिश नहीं करते, संसारी मार्ग जिन कथित मार्ग से एकदम विरुद्ध है इसलिये चतुर्गति संसार अटवी में भ्रमण करनेवालों को मुक्ति मार्ग अच्छा नहीं लगता है यदि कभी वीतराग मार्ग जानने की कोई हलु कर्मी जीव इच्छा करे तो हीनाचारी कुगुरू कुदृष्टान्त लगाके भोले लोगोंको बहका देते हैं; परन्तु न्यायी और विद्वान पुरुष तो सत्यासत्य का निर्णय किये विना नहीं रहते, जिन हलु कर्म्मी को संसार के सुखों

से अरुचि हो गई है वे समदृष्टि तो जानते हैं कि जितने जितने सावद्य जोगों का त्याग किये सो धर्म और आगार रक्खा सो अधर्म्म है, जिस कार्य को साधू मुनिराज सावद्य जान के त्यागा है उस कार्य को करने कराने और अनुमोदन मे पाप है, जिन आज्ञा में धर्म आज्ञा बाहर अधर्म श्रद्धना ही सम्यक्त्व है, जिस कार्य्य की जिन आज्ञा देते नहीं और अनुमोदना भी नहीं करते तथा अनुमोदना करने से साधू को प्रायश्चित आवे तो वही कार्य्य गृहस्थ करे करावे और भला जाने तो एकान्त पाप है, बस यही जिन मार्ग की कुञ्जी है इसे जो अच्छी तरह से जान लिया है उसी के निग्रन्थ प्रवचन अर्थ और परम अर्थ। सद्गुरुओं ने कृपा पूर्वक भव्य जीवों को संसारमयी समुद्र से तैरने के लिये जिनागमानुसार अनेक ग्रन्थ सरलता से बना के उपकार किया है इस के लिये उन महापुरुषों को जितना धन्यवाद दिया जाय सो थोड़ा है निन्दक लोक भले ही उन जितेन्द्रियों की निन्दा करे परन्तु जो संसार मार्ग से विमुख और मोक्ष मार्ग से सन्मुख विज्ञजन हैं सो तो उनका हृदय से आदर करते हैं, स्वामी श्री भीखनजी के चतुर्थ पाट श्रीमद् जयाचार्य्य (श्री जीतमलजी स्वामी नाथ) महा प्रभाविक और शास्त्र वेता हुए उन्होंने भगवती आदि कई सूत्रों की जोड़ ढाल बंध सरल भाषा में बना के जिन वचनों को यथा तथ्य प्रगट किया है तथा अनेक ग्रन्थ बनाये हैं जिन्हें पढ़ने सुनने से न्यायाश्रयियों को तत्थ्यातथ्य का स्पष्ट ज्ञान होता है यह हित शिक्षावली "प्रश्नोत्तर तत्वबोध" स्वामी का ही बनाया हुआ है।

॥ प्रश्नोत्तर तत्वबोध बनने का कारण ॥

सम्वत् १९३३ की साल में अजीमगञ्ज (मकसुदाबाद) शहर से बाबू कालूरामजी १ प्रश्न पत्रिका ५२ दोहा में बना के लाडनूं के श्रावकों को स्वामी श्री जीतमलजी महाराज से मालूम करने को भेजी जिसकी नकल—

॥ प्रश्न पत्रिका ॥

॥ श्री जिनाय नमः ॥

॥ दोहा ॥

चरण-कमल जिनराज का, जामें मुज मन लीन ।
मधुकर जिहां गुञ्जत रहे, ज्ञानामृत रस पीन ॥ १ ॥
नाभेयादिक जिनेश्वरा, तीर्थङ्कर चौवीस ।
गणधर पाठक साधु पद, ध्यावत विश्वावीस ॥ २ ॥
जिनवर भाषित शुद्ध नय, आगम उदधि अपार ।
भ्रमत दूषम कलि काल में, जिन प्रतिमा आधार ॥ ३ ॥
स्वर्ग निवासी देवगण, वलि पाताल कुमार ।
साश्वत जिन प्रतिमा भणी, नित प्रति करत जुहार ॥४॥
एहवी प्रतिमा जिन तणी, प्रणमी तेहना पाय ।
प्रश्न लिखूं अति प्रेम सुं, मुनिवर ना गुण गाय ॥ ५ ॥
क्रोध लोभ मद मोह सवी, त्यागी विषय-विकार ।
जीतमल महाराज कूँ, नमत सकल नर नांर ॥ ६ ॥
दोष बंयालीस टालते, लेते शुद्ध आहार ।
भविजन कुं प्रतिबोधता, विचरे धरा मझार ॥ ७ ॥

॥ सोरठा ॥

तीन करण थिर धार, जीते बावीस परिषह ।
जपते दिल नवकार, शुद्ध करि सञ्जम निरवहै ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

सतावीस गुणे करी, पालो निज आचार ।
पञ्च महाव्रत पालता, एहवा तुम अणगार ॥ ९ ॥
निरजित मद उनमाद पणो, वर्जित विषय विकार ।
तर्जित कर्मादिक अशुभ, गर्जित नाण उदार ॥१०॥
शहर लाडनूं अति भलो, विचरो तिहां धर नेह ।
अप्रति बन्ध विहार करी, बैठा सम्बर गेह ॥११॥
तुम गुण गण मकरन्द से, भविजन भ्रमर लोभाय ।
देश विदेशे मानवी, कर जोड़ी गुण गाय ॥१२॥
मैं पिण गुण श्रवणे सुणी, भेटण की मन चाय ।
ते दिन सफल गीणिस हूं, वन्दी तुमरा पाय ॥१३॥
कर्म ईंधन कूं जालवा, प्रत्यक्ष अग्नि समान ।
इन्द्रिय पांचु वश करी, एहवा तपकी खान ॥१४॥
गुण सगला तुम अङ्ग में, दीखत है प्रत्यक्ष ।
आगम अर्थ विचार थी, किम ताणो इक पक्ष ॥१५॥

पक्ष पक्ष काइ मत करो, ज्ञान दृष्टि मनलाय।
जिनवर प्रतिमा देखतां, दुःख दोहग टल जाय ॥१६॥
च्यार निक्षेपा जिन कह्या, भाव स्थापना नाम।
सप्त नय करी देखल्यो, वरणन ठामों ठाम ॥१७॥
अम्बड श्रेणिक राय तिम, रावण प्रमुख अनेक।
विवध परै भक्ति करी, पाम्या धर्म विवेक ॥१८॥
पञ्चम अंगे भाषियो, प्रगट पणे अधिकार।
सूर्याभे जिन वन्दिया, राय प्रश्रेणी मजार ॥१६॥
विजय देवताये करी, जिन पूजा जिनराज।
पक्षपात कूं छोड़कै, सारो आतम काज ॥२०॥
छठे ज्ञाता अङ्ग में, द्रौपदी पाण्डव नार।
मन वच काया वश करी, पूज्या जिन इकतार ॥२१॥
जङ्घा विद्या चारणा, मुनिवर गुणकी खान।
ते पिण प्रतिमा वन्दता, पञ्चम अङ्ग बखान ॥२२॥
जिन प्रतिमा जिन सारखी, भाखी श्री महावीर।
कोई शङ्का मत आणज्यो, जीम पामो भव तीर ॥२३॥
जिनवर मत स्याद्वाद है, मत जाणो करी एक।
दया दान मन धारल्यो, जद आवे विवेक ॥२४॥
जीव दया पाल्यां थकां, निश्चे होय उपगार।
दया धर्म को मूल है, एहवो आगम सार ॥२५॥

घात करन्ता जीव की, छोडावे कोई जाय ।
अभय दान तेहने कह्यो, आगम में जिनराय ॥२६॥
ज्यो न छुडावो जीव कूं, तो अनुकम्पा नांय ।
अनुकम्पा विन जीव की, समकित पुष्टि न थाय ॥२७॥
गोशालो जलतां थकां, जिनजीं दियो विचार ।
सीतल लेश्याये करी, तेजु लेश्या वार ॥२८॥
ज्याने कहता चूकिया, ते तो मिथ्या बात ।
कल्पातीत स्वाभाव है, तीन लोक के नाथ ॥२९॥
नेम कुंवर तोरण चल्यां, देखी जीव विनाश ।
अनुकम्पा मन लायके, छोड़ाई प्रभु पास ॥३०॥
आप बड़े अणगार हो, पिण ये मोटी खोट ।
ज्यो नवि जीव दया करो, वधे पाप शिर पोट ॥३१॥
पञ्च अधिक चालीस तो, कह्या सूत्र जिनराय ।
द्वातिंस तुम मानता, कुण हेतु के न्याय ॥३२॥
भाख्या नहिं सूत्र में, सहु आगम के नाम ।
ते बत्तीसां बीच है, देखो चित करी ठाम ॥३३॥
सांचा बत्तीस मानता, और न मानो सांच ।
के कोई प्रगट्यो ज्ञान तुझ, अथवा मनकी खांच ॥३४॥
सत्य प्ररूपणा ज्यो करो, तो मानो महाराज ।
गहन अर्थ आगम तणा, भाख्या श्री जिनराज ॥३५॥

मुखपती मुख बांधता, कौन सूत्र अनुसार।
मन की भ्रमता मिटी नहिं, ऐ २ विषम प्रकार ॥३६॥
श्लेस्मा की संजोग सुं, उपजत जीव असंख्य।
जीव सम्मूर्च्छि इन्द्रियन, यामें नहिं को बंक ॥३७॥
गणधर गौतम स्वाम कूं, मिया देवी कह्यो एम।
मुख बांधो वस्त्रे करी, गन्ध न आवे जेम ॥३८॥
ज्यो पहलां बंधी हुन्ती, वलि बंधन किम होय।
एह व्यतिकर तुम जाणजो, सूत्र विपाकी जोय ॥३९॥
जम्भा छिंकां कारणे, मुख ढांके मुनिराय।
दशवैकालिक सूत्र में, देखो मन चितलाय ॥४०॥
सूत्र सबे तुम देखल्यो, बंधण का नहिं पाठ।
भगवती ज्ञाता आदि में, साख सूत्र की आठ ॥४१॥
इत्यादिक सूत्रां तणा, मानो नहीं वचन्न।
आप मते नहीं मानता, करल्यो लाख जतन्न ॥४२॥
लिख्या अजमीगंज शहर सुं, पत्र अधिक उच्छरङ्ग।
खतम खामणा मानज्यो, करि तीन करण इक संग ।४३।
मुनि गुण अति मुज अल्प थी, कैसे लिखूं बणाय।
जैसे जल सब उदधि को, घट बिच नहिं समाय ॥४४॥
कुशल खेम वरते तिहां, धर्म थकी जयकार।
इहां पिण सुगुरु पसाय थी, आणन्द हरष अपार॥४५॥

भक्ति पत्र भावे लिख्यो, धरज्यो चित अधिकाय ।
अधिको ओछो ज्यो हुवे, ते खमज्यो मुनिराय ॥४६॥
लिखज्यो उत्तर एहनो, मत धरज्यो मन रीस ।
मुज मति साद्ध में लिख्यो, धरज्यो मन सुजगीश ॥४७॥
एहवि परूपणा ज्यो करो, तो होय लाभ अपार ।
मुग्ध जीव संसार का, उतरे पेले पार ॥४८॥
देखो बूंटे रायजी, तिम वलि आतमराम ।
त्यागी मन भ्रम आपणो, सारा भविजन काम ॥४९॥
थावो ज्यो तुम एहवा, आगम अर्थ विचार ।
मारवाड ढूंढाड में, बहु जन पामे पार ॥५०॥
सकल संघ श्रावक सहु, वांचीज्यो धर प्रीत ।
उत्तर पाछो अपावज्यो, ए पण्डित जन रीत ॥५१॥
मुनिवर ना गुण गांवतां, होता चित आराम ।
मन तन कपट तजी करी, वन्दत कालूराम ॥५२॥

॥ कलश ॥

इम करी रचना अति ही सुन्दर, वांचता मन उल्लसे ।
देवाधि देवतिलोय स्वामी अन्तर जामी मन वसे ।
संवत उगणीस साल तेतीस मास आश्विन सुद पखे ।
मुनि विनयचन्द पसाय करी ने, गोपीचन्द इम उपदिशे ॥

पूर्वोक्त प्रश्न पत्रिका अजीमगञ्ज से लाडनूं आई सो वहां के श्रावकों ने महाराज से मालूम करी तब स्वामी ने हित शिक्षावली प्रश्नोत्तर तत्वबोध बनाया जिसको श्रावकों ने कण्ठाग्र धार के लिखा कर अजीमगञ्ज बाबू कालूरामजी के पास भेजा था।

यह प्रश्नोत्तर तत्वबोध सूत्रों के प्रमाणों सहित जिन प्रणीत बचनों को यथा तथ्य बताने वाला और आत्मार्थी भव्यों को लाभदायक है इसको वांचने से निष्पक्षी हलु कर्मी जीव जिन मारग को सहज में अच्छी तरह जान कर यथाशक्ति ब्रत पच्चखाण अङ्गीकार करके अपनी आत्मा का कल्याण कर सकते हैं; जो राग द्वेष रहित बीतराग कथित मार्ग है जिस आत्मार्थी को पुद्गलीक सुखों से अरुचि है उन्हीं के लिये यह ग्रन्थ मानो अमृत समान मिष्ट है। इसमे से कितने दोहा आगे श्री० खेतसी जीवराज ने मुम्बई में एक पुस्तक मे छपाए थे परन्तु सम्पूर्ण ग्रन्थ यह आजतक छपा नहीं अब शहर जयपुर में निम्न लिखित श्रावकों ने धारा जिन्हों के नाम।

गणेशीलालजी-लीधड़,	जोरावरमलजी बांठिया,
गुलाबचन्द लूणियां,	सुजानमलजी खारैड,
चन्दनमलजी डूगड,	नाथूलालजी सरावगी,

उपरोक्त पाँचों श्रावकों के पास से पत्र लेकर मैंने संग्रह करके लिखा और सर्वसाधारण को लाभ पहुंचाने के निमित्त मेरी लघु बुद्धि प्रमाण शुद्ध करके छपाया है, यदि कोई अक्षर या लघु दीर्घादि मात्रा की गलती रही होय उसका मुझे बारम्बार मिच्छामि दुकडं है पण्डित और गुणी जनों से मेरी यही प्रार्थना है कि कोई अशुद्धि रही हो उस के लिये क्षमा चाहता हूं।

आप का हितेच्छु और गुणवानों का दास,

श्रा० जौहरी० गुलाबचन्द लूणियां, जयपुर।

प्रश्नोत्तर तत्वबोध

॥ दोहा ॥

नमूं देव अरिहन्त नित, जिनाधिपति जिनराय ।
द्वादश गुणों सहित जे, वन्दूं मन वच काय ॥ १ ॥
नमूं सिद्ध गुण अष्ट युत, आचार्यं मुनिराज ।
गुण षटतीस संयुक्त जे, प्रणमुं भव दधि पाज ॥ २ ॥
प्रणमुं फुन उवज्झाय प्रति, गुण पणवीस उदार ।
नमूं सर्व साधु निमल, सप्तवीस गुण सार ॥ ३ ॥
द्वादश अठ षटतीस फुन, वलि पणवीस प्रगट्ट ।
सप्तवीस ये सर्व ही, गुणवर इकशय अट्ठ ॥ ४ ॥
नवकरवाली नां जिके, मिणियां जगत मझार ।
एक एक जे गुण तणो, इक इक मिणियो सार ॥ ५ ॥
इकसौ अठगुण सहित ए, परमेष्ठी पद पंच ।
ते तो भाव निक्षेप हैं, हूं प्रणमुं तज खंच ॥ ६ ॥
ए सहु नें प्रणमो करी, सखर समय रस सार ।
तत्व बोध अविरोध तर, भाखूं अधिक उदार ॥ ७ ॥

॥ इति मङ्गलाचरणम् ॥

॥ अथ पहलो विजयसुर्याभाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै जे विजय सुर, वलि सुर्याभ विचार।
प्रतिमा नी पूजा करी, शिव तसु उत्तर सार ॥ १ ॥
प्रतिमा पूजी विजय सुर, जीव अनन्ती वार।
विजय पणे सहु ऊपना, पाम्या नहिं भव पार ॥ २ ॥
शक्र सामानिक संगमो, देवलोक स्थित हेत।
पूजे जिन प्रतिमादि ते, राज वैसतां तेह ॥ ३ ॥
तिमहिज सुर्याभादि सुर, राज वैसतां तेह।
प्रतिमा पूतलियादि प्रति, बहु वाना पूजेह ॥ ४ ॥
सुर्याभे सुरलोक नी, स्थिति ना वश थी जाण।
पूजा जिन प्रतिमा तणी, कीधी कही पिछाण ॥ ५ ॥
वृत्त ओघ निर्युक्ति नी, तेह विषे ए ख्यात।
आचार्य गन्धहस्त कृत, के तिहां बहु अवदात ॥ ६ ॥
मिथ्याती वा समकिती विमान अधिपति देव।
देवलोक नी स्थित कुली, प्रतिमादि पूजेव ॥ ७ ॥
समदृष्टि पूजे तिमज, मिथ्याती पूजंत।
देवलोक नी स्थित वशात्, पिण धर्म कार्य नहीं हुन्त ॥८॥
सुर्याभे जिन वन्दिया, प्रभु पट वच आख्यात।
यह पुराण आचार तुम्, जीत आचार सुजात ॥ ९ ॥

यह तुम्हारो कार्य छै, वलि तुझ करवा योग।
ए तुझने आचरण छै, है मुझ आज आरोग ॥१०॥
नाटक नी पूछा करी, तिहां आदर न दियो स्वाम।
मन में भलो न जाणियो, प्रगट पाठ में ताम ॥११॥
वलि मौन राखी प्रभू, देखो पाठ प्रसिद्ध।
जे भाव निक्षेपे आगले, नाटक आज न दीध ॥१२॥
वलि मन मे भलो न जाणियो, ए मिश्र पाठ मझार।
आज्ञा बिन नहीं धर्म पुण्य, देखो आंख उघार ॥१३॥
तो तास स्थापन आगले, आज्ञा किम दे वीर।
एह न्याय छै पाधरो, धारो धर चित धीर ॥१४॥

॥ इति ॥

॥ अथ दूजो द्रोपदी अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै समकित छतां, द्रुपद-सुता अवलोय।
प्रतिमा नी पूजा करी, तसु उत्तर हिव जोय ॥ १ ॥
वृत्ति ओघ निर्युक्ति नी, गंधहस्ती कृत मांय।
जे इक पुत्र थयां पछै, द्रोपदी समकित पाय ॥ २ ॥
पूर्व कृत निदान करी, प्रेरी छती सु आय।
पांच पाण्डव त्यां द्रोपदी, कह्यो सुज्ञाता मांय ॥ ३ ॥

तीव्र भोग अभिलाष तसु, निदान बिन पूरेह ।
समकित किम पामैं तिका, देखो वर चित देह ॥ ४ ॥
दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र में, केइक जेह निदान ।
पूछ्यां समकित नवि लहै, दुर्लभ बोधी कह्या जान ॥ ५ ॥
निदान दोय प्रकार है, न्याय थकी अवलोय ।
द्रव्य प्रते धुर भेद है, भव प्रत्येय पुन जोय ॥ ६ ॥
निदान द्रव्य प्रत्येय तणा, दोय भेद पहिछाण ।
प्रथम भेद जे मंदरस, द्वितीय तीव्र रस जाण ॥ ७ ॥
द्रव्य प्रत्येय मंदरस तणो, पूछ्यां थकां जु तेह ।
समकित चारित बेहु लहै, द्रोपदी नी परे एह ॥ ८ ॥
द्रव्य प्रते तीव्र रस तणो, समकित चर्ण न पाय ।
दशाश्रुतस्कन्ध विषेज वे, दुर्लभ बोधिया थाय ॥ ९ ॥
भव प्रत्येय ना भेद बे, धुर मन्दरस नूं होय ।
द्वितीय तीव्र रस नूं बली, न्याय विचारी जोय ॥१०॥
भव प्रत्येय मंदरस तणो, समकित प्रति पामेह ।
पिण चारित पामै नहीं, वासुदेव जिम एह ॥११॥
भव प्रत्येय तीव्र रस तणो, समकित नहीं पामंत ।
बलि चारित पामै नहीं, ब्रह्मदत्त जिम हुन्त ॥१२॥
द्रव्य प्रत्येय भी भव प्रत्येय, मन्द तीव्र रस ख्यात ।
तेह न्याय थी संभवे, बलि जाणे जगनाथ ॥१३॥

ते माट ये द्रोपदी, निदान विन पूरेह।
प्रतीमा पूजी तिण समे, समकित किम पामेह ॥१४॥
ज्ञाता वृत्ति विषे कह्युं, एक वाचना मांहि।
द्रोपदी जिन प्रतिमा तणी, अरचा कीधी ताहि ॥१५॥
दीसे एतोहिज हूम कह्यो, तेह वृत्तिरे मांहि।
नमुंत्थुणं नुं पाठ त्यां, भाख्यो दीसे नांहि ॥१६॥

॥ वार्त्तिका ॥

कोई कहै द्रौपदी समकित धारणी प्रतिमा क्यूं पूजी ॥तेह नुं उत्तर॥ ओघ निर्युक्ति ग्रन्थ नें अभिप्राय द्रोपदी प्रतिमा पूजी तिण वेल्यां सम्यक्त धारणी नहीं ते देखाडै छे, "दव्वं मि जिणहरा" इति व्याख्या ॥ ओघ निर्युक्ति रव्याख्येयं ॥ द्रव्यलिङ्गी परिग्रहितानि चैत्यानि किं सम्यगदृष्टिर्न समावितानि इति कस्मात् द्रव्यलिङ्गी मिथ्यादृष्टित्वात् ॥ यद्येवं तर्हि दिगम्बर संबंधीनि चैत्यानि कि सम्यकदृष्टी न संभावितानि एतत्सत्यं यद्ये तत्सत्यं तर्हि स्वर्गलोकेषु सास्वतानि चैत्यानि सूर्या भाद्यादेवाः सम्यकदृष्टयः प्रपूज्यंते तचैत्यानि संगमवत् अभव्यः देवाः मदीय मिति बहुमानात् प्रपूज्यं ति पूर्वा परं विरुद्धं न स्यात् वनुसूर्या भाद्यादेवाः तत्कल्पस्थिति वसानुरोधात् अतः एव विरुद्धं न संभवति यद्येवं तर्हि द्रोपद्या सम्यक्त धारण्यायानि चैत्यानि नमस्कृतानि किं द्रव्यलिङ्गी परि ग्रहीतानि न भवंतीत्याह द्रोपदी न सम्यक्त्व धारणी स्यात् ॥ ओघ निर्युक्त्या इत्युक्तं ॥ इत्थी जण संघट्टं तिविहं तिवो ... वज्ज ए साहु इति वचनात् ॥ स्त्री जनस्पर्शो त्रिविधः त्रिविधेन साधुनां वर्जनीयः साधोश्च अकल्पनीयः कर्माचारतः सम्यक्तमावात् द्रौपदी आगमेषु श्रूयते ॥लोमहत्थेय परामुसई॥ लोमहस्ते न परामृशति परामार्जयतीत्यर्थः तत् परमार्जने न जिनस्पर्शो जातः जिनस्य स्त्री जनस्पर्शे न आशातनास्थात्

अशातनात्सम्यक्तभाव अतः एव द्रौपदी न सम्यक्त्व धारणी संभाव्यते पुनः ओघ निर्युक्ति चिरंतन टीकायाँ गंग्रहस्त्याचार्येण उक्तं द्रौपद्या नृप पुत्रिका निदान कृति मर्त्तार पंचस्यछेता निदान भोजितवान जातैक पुत्रः पुनः पाश्चात्साधू सकाशमाप्य प्रवरं सम्यक्त्व मार्गो घरंते ॥ इति ॥

॥ एहनुं अर्थ वार्त्तिका करी कहे छैं ॥

इहाँ कह्यो द्रव्य लिङ्गी परिगृहीत चैत्यप्रति प्रतिमा ते स्यूं सम्यक् दृष्टि संभावित नहीं ते किण कारण थकी इसो कोई प्रश्न पूछे तेहनुं उत्तर द्रव्य लिङ्गी मिथ्या दृष्टि छै ते कारण थकी जो इम छै तो दिगम्बर सम्बन्धी चैत्य प्रतिमा स्यूं सम्यक् दृष्टि संभावित नहीं ए सत्य जो ए सत्य तो स्वर्गलोक ने विषे शाश्वता चैत्य सूर्याभादि देवता समदृष्टि पूजे ते माटै ये पूर्वा पर विरुद्ध नही हुवै काँई एहवी तर्क कीधै छतैं हिव एहनुं उत्तर कहै छै, सूर्याभादि देव स्वर्गलोक ने विषै सास्वता चैत्य पूजे तें कल्प देवलोक नी स्थित वश अनुरोध थकी इण कारज थकीज विरुद्ध नहीं हुवै जो इम छै तो द्रौपदी समकित धारी चैत्य ने नमस्कार कियो ते स्यूं द्रव्यलिङ्गी परिगृहीत न हुई काँई एहवी तर्क कीधे छते हिवे एहनुं उत्तर कहै छे। द्रौपदी समकित धारणी न हुई इम कहे छते वलि पूछ्यो द्रौपदी समकित धारणी किम नहीं, तेहनुं उत्तर। ओघ निर्युक्ति ने विषे इम कह्यो स्त्रीजन ने स्पर्श साधू ने त्रिविध २ बरजवो साधू ने अकल्पनीय कर्म आचरवा थकी समकित नुं अभाव हुवे ते कारण थकी साधू ने स्त्री जन नुं स्पर्श त्रिविध २ बरजवूं द्रौपदी आगम ने विषै साँभलीये छे "लोमहत्थं परामूसई" लोमहस्त करिके फरसै पूंजे इत्यर्थ, ते पूंजवै करी जिन नूं स्पर्श हुवै जिन ने स्त्री जन स्पर्शवे करी अशातना हुवै आशातना करिवे करी समकित नूं अभाव इण कारण थकी द्रौपदी समकित धारणी न संभाविये, वलि ओघ निर्युक्ति नी चिरंतन टीका ने विषै गन्धहस्त आचार्य कह्यो द्रौपदी नृप पुत्री निहाणावी. करण हारी

तिणे भर्तार पंत्र ने करी निहाणो भोगवी एक पुत्र थयाँ पछे साधू समीपैं समकित पामीं पहवो ओघ निर्युक्ति नी टीका नैं विषे गन्धहस्त आचार्य कह्यो ते मिथ्यात्व ना वश थकी पुष्पादिक करी प्रतिमा पूजी ।

॥ अथ तीसरा निक्षेपा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै बावीस जिन, तसु मुनि प्रतिक्रमणेह ।
किस्युं करै चोवीस्थो, द्वितीय आवश्यक जेह ॥ १ ॥
तसु कहिये महाविदेह ना, मुनि प्रतिक्रमण विषेह ।
द्वितीय आवश्यक स्यूं करै, न्याय विचारो तेह ॥ २ ॥
नहीं तिहां अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी पिण नांहि ।
ते माटे नहिं षट अरा, सम अद्धा कहिवाहि ॥ ३ ॥
तिहां अनन्ता शिव गया, जासे मुक्ति अनन्त ।
मेल नहीं चोवीस नुं, देखोजी बुद्धिवन्त ॥ ४ ॥
इक इक विजय विषे वली, एक एक जिनराज ।
वर्तमान काले हुवे, उत्कृष्ट पणे समाज ॥ ५ ॥
हिव ते क्षेत्र विदेह ना, जिन थया सिद्ध अनन्त ।
तसु वांद्यां चोवीस नी, संख्या नथी रहन्त ॥ ६ ॥
थासे सिद्ध अनन्त जिन, तसु वंदे जे कोय ।
तो पिण जिन चोवीस नी, संख्या न रहै सोय ॥ ७ ॥

विजय विषै जो वर्त्तता, वंदे इक जिनराय।
तो पिण जे चोवीसत्थो, किण विध कहिये ताय ॥ ८ ॥
विदेह क्षेत्र ना मुनि करै, द्वितीय आवश्यक जेह।
विचला जिन बावीस ना, मुनि पिण तिमहिज करेह ।९।
बे टंक नूं तसु नियम नहीं, पिण ज्यो किणहिकवार।
पडिक्कमणा मे स्युं करै द्वितीय आवश्यक सार ॥१०॥
ज्ञाता अध्ययने पञ्चमें, शेलक ऋषि ना पाय।
पथक पडिक्कमणो करत, वांद्या आख्या ताहि ॥११॥
ते माटे जे जिन हुवे, तेह तणो ले नाम।
द्वितीय आवश्यक नुं तदा, नाम उक्कित्तता ताम ॥१२॥
जिन चोवीस तणों जिहां नियम नहीं छे ताम।
तिण सुं चोवीस्था तणें, स्थान उत्कीर्त्तन नाम ॥१३॥
अनुयोग द्वार विषे प्रमत्त, आवश्यक षट मांय।
अर्थ तणा अधिकार षट, आख्या श्री जिनराय ॥१४॥
द्वितीय आवश्यक नै विषे, उत्कीर्तन आख्यात।
कह्युं अर्थ अधिकार ये, जिन गुन नाम विख्यात १५।
विदेह क्षेत्र मे मुनि तणे, द्वितीय आवश्यक जान।
स्व स्व जिन गुन नाम ते, उत्कीर्त्तन अभिधान ॥१६॥
जेह विजय नहीं जिन तदा, द्वितीय आवश्यक मांहि।
पूर्व जिन गुण नाम ते, इसो संभवे ताहि ॥१७॥

बिचला जिन बावीस ना, मुनि ने स्वजिन नाम।
उत्कीर्तन अभिधान तसु, द्वितीय आवश्यक ताम ॥१८॥
धुर जिन ना मुनि ले तिमज, स्वजिन गुन फुन नाम।
द्वितीय आवश्यक संभवे, उत्कीर्त्तन अभिराम ॥१९॥
वा धुर जिनना मुनि तणे, चोवीस्थो ज्यो होय।
तो गत चौबीसी हुई, जाणे केवली सोय ॥२०॥
थया नहीं चोवीस जिन, तसु वारे अवलोय।
द्वितीय आवश्यक ने विषे, चोवीस्थो किम होय ॥२१॥
चोवीसमा शासण धणी, तेह तणी अपेक्षाय।
आख्युं छे चोवीस्थो, द्वितीय आवश्यक मांय ॥२२॥
द्वितीय आवश्यक ना कह्या, उभय नाम अवलोय।
उत्कीर्त्तन चोवीस्थो, तसु हेतु हिव जोय ॥२३॥
पञ्चम अंगे धुर कह्यूं, इन्द्रभूति सुप्रसिद्ध।
वृत्ति विषे कह्यो नाम ये, मात पिता नूं दीध ॥२४॥
गोतम गोत्र करि तसु, गौतम नाम कहाय।
उत्तराध्ययन तेवीस में, गाथा छट्ठी मांय ॥२५॥
तिम जिनवर चोवीसमा, तसु वारे अवलोय।
गुणे नाम चोवीस जिन, ते चोवीस्थो होय ॥२६॥
ते चोवीस्था ने विषे, उत्कीर्त्तन अभिराम।
अर्थ तणा अधिकार छे, पिण मुख्य चोवीस्थो नाम ॥२७॥

विदेहक्षेत्रमें बीस जिन, तसु मुनि स्वजिन नाम।
अर्थ तणा अधिकार करि, ते उत्कीर्तन नाम ॥२८॥
सूत्र उववाई ने विषे, तप ना द्वादश भेद।
तृतीय भेद भिक्षाचरी, वाक नाम संवेद ॥२९॥
समवायंग विषे कह्या, बारे भेद अभिराम।
भिक्षाचरी ने स्थान जे, वृत्ति संक्षेप सु नाम ॥३०॥
भिक्षाचरी ना नाम बे, द्वितीय आवश्यक तेम।
उत्कीर्तन चोवीस्थो, उभय नाम तसु एम ॥३१॥
नवमा जिन ना नाम बे, सुविध अने पुफदन्त।
आख्या लोगस में प्रगट, देखोजी बुद्धिवन्त ॥३२॥
पुष्प सरिसा दन्त तसु, पष्प दन्त अभिराम।
इम अर्थ तणा अधिकार करि, उत्कीर्त्तन पिण नाम॥३३॥
कृष्ण अने बलभद्र नो, केशव राम आख्यात।
उत्तराध्ययन बावीसमें,तिम द्वितीय आवश्यक ख्यात॥३४॥
किहां च्यार महाव्रत कह्या,तास कह्या चिहुं याम।
उत्तराध्ययन तेवीसमें, केशी मुनि गुण धाम ॥३५॥
द्वितीय आवश्यक ना तिमज, उभय नाम अवलोय।
उत्कीर्तन चोवीस्थो, सहु भावे जिन जोय ॥३६॥
चोवीसम जिन ना मुनि, करे चोवीस्थो ताम।
विदेह तेवीस तणा मुनि, उत्कीर्तन जिन नाम ॥३७॥

मुझ ने स्यासे एहवा; वारूं न्याय विचार।
वलि केवली जे वदे, तेहिज सत्य उदार ॥३८॥
भाव निक्षेपे भरत नो, चौवीसी वर्त्तमान।
पाठ वन्दे बहु ठाम छे, लोगस माहिं सुजान ॥३९॥
भाव निक्षेपे ऐरवत, चौवीसी वर्त्तमान।
पाठ वंदे बहु ठाम छे, समवायंगे जान ॥४०॥
चौवीसी भरत ऐरवत, अनागत जिन नाम।
द्रव्य निक्षेपो तूर्य अङ्ग, वंदे पाठ न ताम ॥४१॥
अष्ट अने चालीस ना, वर्त्तमान जिन नाम।
भाव निक्षेपो ते भणी, पाठ वदे बहु ठाम ॥४२॥
अष्ट अने चालीस ना, अनागत जिन नाम।
द्रव्य निक्षेपो ते भणी, वंदे टाल्यो स्वाम ॥४३॥
द्रव्य निक्षेपे एह जिन, गणधर वंद्या नांहि।
तो चौवीस्यो करतां छतां, द्रव्य जिन किम वंदाहि ॥४४॥
तीर्थंकर घर मे छतां, द्रव्य निक्षेपे जेह।
तेहने मुनि वंदे नहीं, तुझ लेखे पिण तेह ॥४५॥
तो होनहार जिनवर भणी, चौवीस्या विषेह।
मुनिवर किम वंदे तसु, न्याय विचारी लेह ॥४६॥
वलि कह्यो अनुयोग द्वारमे, जे आवश्यक नूं जाण।
होस्ये पिण न थयो हजी, ते द्रव्य आवश्यक पिछाण ॥४७॥

तिमजे कोई चूक मुनि हुस्ये, पिण हिवड़ां गृहस्थ मणेह।
कहिये द्रव्य साधू तसु, आवश्यकवत् एह ॥४८॥
जो वन्दो द्रव्य निक्षेप ने, तो तिण द्रव्य मुनि रा पाय।
तुमे वन्दता क्यूं नथी, तुम श्रद्धारे न्याय ॥४९॥
चौबीसी वर्त्तमान ने, वन्दे बहु ठामेय।
अनागत वांद्या नथी, देखो तूयं अंगेय ॥५०॥
तृतीय निक्षेपो द्रव्य तसु, गणधर वंद्यो नांहि।
तो द्वितीय निक्षेपो स्थापना, किम वंदीजे ताहि ॥५१॥
द्रव्य तीर्थंकर कृष्ण था, दीधा नेम बताय।
नेम तणा साधु साधव्यां, त्यां क्यूं नहीं वंद्या पाय ॥५२॥
उलटो कृष्ण भणी तिणां, दीधो मगां लगाय।
तो चौबीस्थो करतां छतां, किम वंदे मुनिराय ॥५३॥
द्रव्य जिन श्रेणिक नृप हुंतो, दीधो वीर बताय।
वीर तणा साधु साध्वियां, त्यां क्यूं नहीं वंद्या पाय ॥५४॥
तीर्थंकर वन्दन तणुं, तसु राख्यां रे चाय।
तो कृष्ण अने श्रेणिक तणा, त्यां क्यूं नहीं वंद्या पाय ॥५५॥
उलटी करी विडम्बना, जाणी ने भरतार।
तो चौबीस्थो करतां छतां, किम वंदे अणगार ॥५६॥
जिन वन्दे तिहुं काल ना, नमोत्थुणं रे अन्त।
किणी सूत्र में ते नहीं, देखोजी बुद्धिवन्त ॥५७॥

जे कोई जीव अजीव नूं, नाम आवश्यक देह ।
ते आवश्यक नो प्रभु, नाम निक्षेप कहेह ॥५८॥
अनुयोगद्वार विषे इसो, प्रगट पाठ महिछाय ।
तिमहिज तीर्थंकर तणूं, नाम निक्षेपो जाय ॥५९॥
जिम कोई जीव अजीव नूं, ऋषभ नाम छै जेह ।
ऋषभ देव भगवान नो, नाम निक्षेपो तेह ॥६०॥
जो वांदो नाम निक्षेपने, तो तिण ऋषभारा पाय ।
क्यूं नहिं वांदो छो तुम्हे, तुम श्रद्धा रे न्याय ॥६१॥
किण रो नाम दियो वली, अरिहन्तने भगवान ।
नाम अरिहन्त वन्दो तुम्हे, तो क्यूं नहिं वन्दो जान ॥६२॥
सिद्ध निरञ्जन नाम पिण, इसे बहु जग मांहि ।
नाम सिद्ध वन्दो तुम्हे, तो क्यूं नहिं वन्दो याहि ॥६३॥
केइक मनुषां रा कारटा, ते पिण बाजे आचार्य ताय ।
वन्दो नाम आचार्य तुम्हे, तो क्यूं नहिं वंदो पाय ॥६४॥
केईक ब्राह्मण लोक में, बाजे छै उपाध्याय ।
नाम उपाध्याय वंदो तुम्हे, तो क्यूं नहिं वंदो पाय ॥६५॥
जोगी सन्यासी प्रमुख, साधू नाम कहाय ।
नाम साधु वांदो तुम्हे, तो क्यूं नहिं वन्दो पाय ॥६६॥
ज्ञान दर्शन चारित्र ना, गुण नहीं छै जे मांय ।
तेह वंदवा योग किम, निमल विचारो न्याय ॥६७॥

कोई कहे आचार्य्य ना, उपाध्याय ना ताहि।
उपग्रण नी आशातना, कहि टालवी काहि ॥६८॥
ज्ञान दर्शन चारित्त तणा, तेह उपधिरै मांहि।
केहवा गुण छै ते भणी, उपधि संघटवुं नांहि ॥६९॥
नवमें दशवैकालिके, द्वितीय उद्देशे ख्यात।
इम कहे उत्तर तेहनुं, सांभलजो अवदात ॥७०॥
सूत्र विषे तो इम कह्यो, गुरु कायाई करेह।
तिमहिज गुरु नां उपधि करि, संघटे थये क्षतेह ॥७१॥
मुझ अपराध खमो तुम्हे, वलि न हूं करूं कोय।
इम भाषे सुविनीत शिष्य, तास न्याय हिव जोय ॥७२॥
आचार्य्य ना उपधि ए, तास प्रयोगे थाय।
जिम गुरु के सहवर्त्ती तनुं, तेम उपधि पिण ताय ॥७३॥
भाव निक्षेपे गणपति, तास उपधि तनु जेम।
तासु संघट्ट थयां खामवुं, आख्यूं सूत्रे एम ॥७४॥
थयुं वलि अपराध मुझ, खमूं तुम्हे अवलोय।
ए बच प्रत्यक्ष गुरु तणे, न्याय विचारी जोय ॥७५॥
जो खमायवो हुवे उपधि ने, तो देखो चित देह।
वन्दना करी खमायवे, उपग्रण स्युं जाणेह ॥७६॥
ये तो उपधि सहित जे, आचारज नी जोय।
कही अशातना टालवी, नथी अन्यथा कोय ॥७७॥

सयनाशन गणपति तणा, तास संघट्टवूं नांहि।
तेहिज आचार्य विहार करि, गया हुवे जो ताहि ॥७८॥
सयणाशण तेहिज तब, शिष्य सेवे की नांहि।
भोगवियां आशातना, लागे की नहिं ताहि ॥७९॥
जे पृथिवी शिल ऊपरे, बैठा श्री भगवान।
कालान्तर गोयम सुधर्म, बैठे की नहीं जान ॥८०॥
छाया गणी ना तनु तणी, शिष्य आक्रमी तास।
चाले की चाले नहीं, जोवो हिये विमास ॥८१॥
तुम्ह लिखे छाया भणी, आक्रमवूं पिण नांहि।
संघटो पिण करवुं नहीं, गुरु छाया नुं ताहि ॥८२॥
ते माटे ए स्थापना, वन्दन योग न होय।
ज्ञान दर्शन चारित्र तणा, तिणमें गुण नहिं कोय ॥८३॥
अथवा आचार्य तणा, पगल्यां तणी पिछाण।
तुम्हे करो छो स्थापना, तेहने वन्दो जाण ॥८४॥
तो चाले गुरु केड शिष्य, गमन करन्ता जोय।
धरती ऊपर गुरु तणा, पगला मंडे सोय ॥८५॥
शिष्य ना पग ते ऊपरे, पडियां दण्ड स्युं थाय।
वन्दनीक पगला कहो, ते लिखे दण्ड पाय ॥८६॥
चारित सहित जे गुरु भणी, वंदे तीरथ च्यार।
काल कियां तसु कायने, भस्म करे तिह वार ॥८७॥

ज्ञान दर्शन चारित तणा, तिणमें गुण नहिं कोय ।
तिणसुं दहन क्रिया कियां, अशातना नहिं होय ॥८८॥
करी स्थापना तेहने, वांद्या कहो छो धर्म ।
तो ए सागे तनु बालियां, लागे आशातना कर्म ।८६॥
आवश्यक नो जाण थो, काल कियो तिहवार ।
द्रव्य आवश्यक तनु कह्यो, देखो अनुयोगद्वार ॥६०॥
तिम मुनि काल कियां छतां, जीव रहित जे देह ।
द्रव्य साधु कहिये तसु, न्याय विचारी लेह ॥६१॥
वन्दनीक द्रव्य मुनि कहो, तो तुझ लेखे ताय ।
द्रव्य साधु बाल्यां छतां, अशातना पिण थाय ॥६२॥
जम्बूद्वीप पन्नतीमें कह्यो, जिन जनम्यां सुर राय ।
जन्म भुवन जिनवर तणा, तसु प्रदक्षिणा दे आय ॥६३॥
जिन.ने वा जिन मात प्रति, प्रदक्षिणा त्रण वार ।
देई कर जोड़ी करी, वंदे शक्र अवधार ॥६४॥
हे धरणहारी रतन कूक्षिनी, थावो तुझ नमस्कार ।
इह विध सुरपति उचरे, ए पिण जीत आचार ॥६५॥
तुम लेखे मरुदेवी प्रति, इन्द्र कियो नमस्कार ।
पिण समकित किण पे लहो, वारूं न्याय विचार ॥६६॥
ग्रहस्थ भयो जिन जनक ना, पद प्रणमे अवलोय ।
लौकिक हेते जाणवुं, धर्म हेतु नहिं कोय ॥६७॥

ज्ञाता अध्ययन आठमें, मल्लिनाथ भगवान ।
लागी पगां पिता तणे, लोकिक हेते जान ॥९८॥
मल्लिनाथ थया केवली, तठा पछे मा तात ।
वांणी सुणी श्रावक थया, पाठ विषे अवदात ॥९९॥
इण लेखे मल्लि नो पिता, पहिलां श्रावक नांहि ।
तास पाय प्रणम्यां मल्लो, धर्म नहीं तिण मांहि ॥१००॥
तिम हिज द्रव्य जिनवर भणी, इन्द्र करे नमस्कार ।
ए तसु जीत आचार छे, श्रीजिन आज्ञा बार ॥१०१॥
जीव रहित जिन देह ते, द्रव्य जिन तास कहेह ।
ते वंदनीक किण विध हुवे, न्याय विचारी लेह ॥१०२॥
जो वन्दनीक ते द्रव्य हुवे, तो तुझ लेख कहेह ।
तनु प्रते दग्ध क्रियां छतां, आशातन लागेह ॥१०३॥
ज्यो द्रव्य निक्षेप वन्दो तुम्हे, तो जमाली आदि ।
द्रव्य साधु कहियो तसु, वन्दो क्यूं न संवाद ॥१०४॥
भावे जे साधु हुन्तो, सेव्यो तिण अणाचार ।
भाव निक्षेपो तसु गयो, के गयो द्रव्य जिवार ॥१०५॥
मुनि वेसे सेव्यो तिणे, अणाचार अवधार ।
ते द्रव्य मुनि वन्दो के नहि, धर्म हित धर प्यार ॥१०६॥
कृष्णादिक नरके पड्या, द्रव्य जिनवर कहिवाहि ।
भावे कहिये नेरिया, वन्दनीक ते नांहि ॥१०७॥

तीर्थंकर जनस्यां पछे, ते पिण द्रव्य जिनराय ।
भाव निक्षेपे तेहने, ग्रहस्थी कहिये ताय ॥१०८॥
तीर्थंकर दीक्षा लियां, तसु द्रव्य जिन कहिवाय ।
भावे ते मोटा मुनी, वन्दनीक तसु पाय ॥१०९॥
चौतीस अतिशय शोभता, वाणी गुण पैंतीस ।
केवल ज्ञान थयां पछे, भावे जिन जगदीश ॥११०॥
वन्दनीक भावे मुनी, वलि भावे जिनराय ।
ओलख ने जपियां थकां, पातक दूर पुलाय ॥१११॥

॥ इति निक्षेपाधिकार ॥

॥ अथ चतुर्थम् अम्बडाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे अम्बड कह्यु, अरिहन्त बिन अवलोय ।
वलि अरिहन्त ना चैत्य बिन, नथी वंदवा मोय ॥ १ ॥
प्रथम उपाङ्ग विषे इसो, आख्यो श्री जिनराय ।
ते अरिहन्त ना चैत्य कुण, तसु उत्तर कहिवाय ॥ २ ॥
अरिहन्त तो धुरपद विषे, प्रतिमा चैत्य कहाय ।
तो मुनिवर नहीं वन्दवा, अन्य वर्ज्या तिण न्याय ॥ ३ ॥
मुनि पद तो है पञ्चमो, ते धुरपद में नहीं आय ।
तिण कारण अरिहन्त ना, चैत्य मुनि कहिवाय ॥ ४ ॥

जिन प्रतिमा जिन सारसी, तुम्हे कहो तिण न्याय ।
प्रतिमा तो धुरपद हुई, मुनि धुरपद नहीं थाय ॥ ५ ॥
अरिहन्त तो ए देव है, अरिहन्त चैत्य सु सन्त ।
तेह गुरु ए देव गुरु, विना न अन्य वंदन्त ॥ ६ ॥

॥ इति अम्बडाधिकार ॥

॥ अथ पंचम् आनन्दाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै आनन्द कह्यो, अनतीर्थिक संग्रहीत ।
अरिहन्त ना जे चैत्य प्रते, वन्दू नहीं प्रतीत ॥ १ ॥
एह सातमा अङ्ग में, दाख्यो गणधर देव ।
ते अरिहन्त ना चैत्य कुण, उत्तर तासु कहेव ॥ २ ॥
आनन्द कह्युं अण तीर्थ ने, अणतीर्थिक ना देव ।
अन्यतीर्थिक परिग्रहीत जे, अरिहन्त चैत्य कहेव ॥ ३ ॥
ए तीनूं ने वन्दना करवी कल्पे नांहि ।
नमस्कार करिवूं नहीं, ए तीनूं ने ताहि ॥ ४ ॥
पहिला बोलाव्यां बिना, बोलूं नहीं इक बार ।
बार बार बोलूं नहीं, नहीं आपूं तसु आहार ॥ ५ ॥
चैत्य इहां प्रतिमा हुवे, तो बोलावे केम ।
वलि आपे अशणादि किम, न्याय विचारो एम ॥ ६ ॥

कोई कहे तसु देव ने, किम बोलावे ताय।
वलि अशनादिक किम दिये, निमल सुणो तसु न्याय ॥७॥
पुत्र सुजेष्टा नूं कह्यो, महादेव तसु देव।
नवमें ठाणे अर्थ में, ते वीर थकां स्वयमेव ॥ ८ ॥
चेडा राजा नी सुता, तेह सुजेष्टा जाण।
तिण कारण तसु देव ते, विद्यमान पहिछाण ॥ ९ ॥
तेहने बोलावे नहीं, वलि नहीं आपे आहार।
वलि चैत्य मुनि अरिहन्त ना, भ्रष्ट थया तिणवार ॥१०॥
ते अन्य तीर्थिक में जई मिल्या, अन्य तीर्थिक पिण तास।
ग्रहण किया निजमत विषे, अन्य तीर्थिक ग्रहित विमास ॥
नहीं बोलावूं तेहने, वलि नहीं आपूं आहार।
अभिग्रह ए आनन्द लियो, वारू न्याय विचार ॥१२॥

॥ इति आनन्दाधिकार ॥

अथ षष्टम् जंघा विद्याचारणाधिकार

॥ दोहा ॥

कोई कहे मुनि लब्धि धर, जङ्घा विद्याचार।
जावे रुचक नन्दीश्वरें, वन्दे चैत्य तिवार ॥ १ ॥
बीसम शतके भगवती, नवम उद्देश विशेह।
प्रभू आख्या ते चैत्य कुण, उत्तर तास कहेह ॥ २ ॥

जङ्घा. विद्या-चारणा रुचक नन्दीश्वर जाय।
तिहां वन्दे पाठ छै, पिण नमंसइ नांहि ॥ ३ ॥
मानुषोत्तर गिरि विषै, कूंट च्यार आख्यात।
नथी कह्यूं सिद्धायतन, तूर्य ठाण अवदात ॥ ४ ॥
वृत्ति विषै द्वादश कह्या, तिहां देवता वास।
आख्या पिण सिद्धायतन, कूंट कह्यो नहीं तास ॥ ५ ॥
तिहां चैत्य वन्दे किसा, तिण सूं चैत्य सुज्ञान।
करै तास गुणग्राम अति, देखो ने जे स्थान ॥ ६ ॥
धन भगवन्त नो ज्ञान ए, धन भगवन्त रो ज्ञान।
जेम कह्यु तिमहिज सहु, इम करै स्तुति जान ॥ ७ ॥
नमसई तिहा पाठ नहो, वन्दई पाठज एक।
तेहनुं छै स्तुति अर्थ, देखो धर सु विवेक ॥ ८ ॥
प्रश्न हजारां पूछिया, गोयम पञ्चम अङ्ग।
तिहां वंदई नमंसई, छै बिहुं पाठ सुचङ्ग ॥ ९ ॥
ए तो छै अति अजब गति, रुचक द्वीप लग जाय।
तिहां नमंसई पाठ नहीं, नमोत्थूणं पिण नांय ॥१०॥
श्रावक तुङ्गिया ना प्रवर, आया स्थिवरां पास।
तिहां वन्दई नमंसई, उभय पाठ गुण रास ॥११॥
जो प्रतिमा वन्दन गया, तो करता नमस्कार।
नमोत्थुणं गुणता वलि, देखो हृदय विचार ॥१२॥

तथा चैत्य ते जिन बहु, तेह तणा गुण गाय।
धन्य प्रभू इम कहे तसु, सत्य वचन सुखदाय ॥१३॥
कोई कहे प्रभूजी भणी, चैत्य किहां आख्यात।
उत्तर तेहने आखिए, सुणज्यो सुगण सुजात ॥१४॥
सूर्याभे मन चिन्तव्यु, कल्याणकारी स्वाम।
दूरितोपशमकारी थकी, मंगलीक अभिराम ॥१५॥
तीन लोकना अधिपति, तिणसूं देवत नाथ।
हेतु सुप्रसन्न मन तणा, तिण सुं चैत्य आख्यात ॥१६॥
राय प्रश्रेणी वृत्तिमें, चैत्य अर्थ जिन ख्यात।
ते माटे इहां संभवे, बहु जिन गुण अवदात ॥१७॥
बहु जिनेंद्र था जिन कहे, रुचक नन्दीश्वर मांय।
भाव कह्या तिमहिज सहु, देखि हिये हुलसाय ॥१८॥
धन्य जिनेंद्र धन्य केवली, गिरि कूंटादिक जेह।
जेम कह्या तिमहिज ए, इम तसु स्तुति करेह ॥१९॥
ते माटे इहां चैत्य ते, बहु जिन कहिए सोय।
वन्दई तसु स्तुति करे, एह अर्थ पिण होय ॥२०॥
बिन आलोयां ते मुनि, काल करे जो कोय।
तास विराधक प्रभु कह्यो, पाठ विषे अवलोय ॥२१॥
जब को तर्क करे इसी, दिसां गोचरी जाय।
पाछा आवी पडिकमे, ईर्यावही मुनिराय ॥२२॥

तिम ए पिण आवी करी, ईर्यावही गुणेय ।
तासु उत्तर कहीजिये, सांभलज्यो चित्त देय ॥२३॥
दिसां गोचरी मुनि जई, आवंतां कियो काल ।
तेह विराधक नहीं हुवे, जोवो नयण निहाल ॥२४॥
जंघा विद्याचारणा, काल कियां अन्तराल ।
तास विराधक प्रभु कह्या, नथी आराधक न्हाल ॥२५॥
तिणसुं ईर्यावही तणूं, नथी मिले ए न्याय ।
लब्धि फोड़वी तेहनो, दंड कह्यो जिनराय ॥२६॥

॥ वार्त्तिका ॥

कोई कहे जंघाविद्याचारण लब्धि फोडी ने नन्दीश्वर द्वीपे जाय ते आलोयां बिना मरे तो विराधक कह्यो ते आलोयणा ईर्यावही नी कही छै दिसां गोचरी आवै तेहनी पिण ईर्यावही गुणे तिम ए पिण लब्धि फोडने नन्दीश्वर द्वीप गया तेहनी पिण इर्यावही जाणवी इम कहै तेहने कहिणो इम ईर्यावही गुण्यां बिना विराधक हुवै तो गोचरी पिण जाणो नहीं कदा ठिकाणे आयाँ बिना पहिलाँ मरि जाय तो विराधक हुवे, वलि गाम बाहिर दिसां जाणो नहीं । विहार करणो नहीं । पडिलेहणा करणो नहीं । क्षण भंगूर काया है सो ईर्यावही गुणियाँ बिना पहिलां ही मर जाय तो विराधक होवणो पड़े ते माटे; साधू गोचरी गयो पाछो आवतां बीच में काल करै ईर्यावही पडिकमियाँ बिना जय तो ओ पिण विराधक हुवे; इम विहार करतां विचे ईर्यावही पडिकम्यां बिना काल करै तो उपरी अह्वारे लेखै ओ पिण विराधक हुवे, इम तो पडिलेहणा कियां पछे अथवा विचे ईर्या

यही पडिकमियाँ विना काल करै तो उणरी श्रद्धारे लेखे ओ पिण विराधक हुवै, धर्म कारणे जाता धर्म कारणे आवताँ ईर्यावही पडिकमियाँ विना काल करै तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक हुवै, जद तो तीर्थंकर ने वाँदवा जाताँ आवताँ ईर्यावही पडिकमियाँ विना काल करै तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक, अरिहन्त गणधर आचार्य्य उपाध्याय महामोटा पुरुषाँ ने वलि साधू साध्वियाँ ने वांदण जाताँ ने आवताँ ईर्यावही पडिकमियाँ विना काल करै तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक, इम इत्यादिक अनेक कार्य्य कियाँ ईर्यावही पडिकमवी छै, जद ते पिण कार्य्य करताँ ईर्यावही पडिकमियाँ विना काल करै तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक, इम ईर्यावही पडिकमियाँ विना विराधक हुवे छे तो साधू ने पहिलाँहीज ईर्यावही पडिकमवा वालो कार्य्य करणोहिज नहीं, तथा पडिलेहणा कियाँ पछे अथवा विचे ईर्यावही पडिकमियाँ विना काल करै तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक हुवे, इम विहार करताँ विचे ईर्यावही पडिकमियाँ विना मरे तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक हुवे, जो इम विराधक हुवे जद तो तीर्थंकर ने वन्दवा जाताँ ने आवताँ विचे ईर्यावही पडिकमियाँ विना काल करे तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक हुवे, अरिहन्त गणधर आचार्य्य उपाध्याय महा मोटा पुरुषाँ ने वलि साधु साध्वियाँ ने वन्दवा जाताँ ने आवताँ विचे काल करे तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक छै, इम ईर्यावही पडिकमियाँ विना विराधक हुवे तो साधाँने पहिलाँहिज ईर्यावही पडिकमवारो कार्य्य करणोहीज नहीं, इण श्रद्धारे लेखे तो साधू ने हालवो चालवो इत्यादि क्यूंही कार्य्य करणो नहीं, अरिहन्त ने भगवन्त ने तीर्थंकर ने गणधर ने आचार्य्य ने उपाध्याय ने महा मोटा पुरुषाँ ने साधाँ ने साध्वियाँ ने किण ही ने वन्दवा जाणो नहीं कदा विचे ही काल करै तो विराधक पणो थाय छै आउखा रो भरोसो छै नहीं तिणसूं, उणरी श्रद्धा रे लेखे तो धर्म रो कार्य्य करणा ने कठे ही जांणो नहीं जाताँ ने आवताँ ईर्यावही पडिकमियां विना मरे

तो विराधक पणो थाय छे, इण श्रद्धारै लेखे तो शासन सर्व ऊठ जावे या तो महा विपरीत श्रद्धा छै, अरिहन्त भगवन्त तो यूं कह्यो छै साधू चारित्रयाने कर्मयोगे अनेक भारी कार्य्य कीधा छै मोटा मोटा दोष सेव्या छे पछे गुरु कने अनेक कौसाँ लगे आलोवण चाल्यो छै कदा गुरु पासैं नहीं पूगो बिचे ही आलोयाँ विना काल करै तो तिण ने भगवन्त आराधक कह्यो छे, जंघा चारण ने विद्या चारण नी ईर्यावही पडिकमवारी सरधा नहीं थी काँई ? ये विराधक किसे लेखे हुवे तो ऐसा ये काँई भोला छा अने बलि थाँरै ईर्यावही पडिक्कमवा री सरधा न हुवे तो गौचरो दिसाँ विहार प्रमुख नी गुरु कने आज्ञा माँगे तो आज्ञा पिण देणी नहीं बिच में मरि जाय तो विराधक हुवै, बलि नन्दी उतरवा री पिण आज्ञा माँगे तो आज्ञा देणी नहीं बिचे मरि जाय तो विराधक हुवे ते थारे नीकलियाँ पहिलाँ ही ईर्यावही तो न गुणी इम जो विराधक हुवै तो नन्दी उतरतां मोक्ष किम जाय, सागारी संथारो पचखी नावामें बैसे एहवुं आचाराङ्ग अध्येयने तीसरे कह्यो छे, जो ईर्यावही गुणियाँ विना विराधक हुवे नावा में सागारी संथारो पचखी किम बैसे, बलि नन्दी उतरवा री साधाँ ने भगवान आज्ञा दीधी अने गौचरी प्रमुख नी पिण आज्ञा दीधी छै तिण सूं नन्दी नावा उतरताँ गौचरी प्रमुख पूर्वे कार्य्य कह्या ते करताँ मरै तो अथवा गोचरी प्रमुख कार्य्य करी ठिकाणे आयाँ ईर्यावही गुण्याँ पहिलाँ मरै तो आराधक पिण विराधक नही।

॥ दोहा ॥

धर्म हेतु हिन्सा कियां, तुम्हे दोष कहो नांहि।
पुष्पादिक आरम्भ में, धर्म कहो क्यो ताहि ॥२७॥
तो यात्रा करवा भणी, लब्धि फोड़वो जेह।
धर्म हेतु ए कार्य नो, किम प्रभू दण्ड कहेह ॥२८॥

याना अर्थे लब्धि जे फोड़वियां दण्ड थाय ।
तो पुष्पादिक कार्य में, धर्म पुण्य किम थाय ॥२६॥

॥ इति ॥

॥ अथ सातमो धर्मार्थ हिन्सा न गिणै तेहना उत्तर नुं अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै धर्म कारणे, जीव हणे ओ कोय ।
पाप न लागे तेहने, हिव तसु उत्तर जोय ॥ १ ॥
देवल प्रतिमा कारणे, हणे जु पृथिवी काय ।
मन्द बुद्धि तेहने कह्या, दशमा अङ्ग रे मांय ॥ २ ॥
अर्थं धर्म ने हेते हणे, मन्द बुद्धि कह्या तास ।
ए पिण दशमा अङ्ग मे, प्रथम अध्ययन विमास ॥ ३ ॥
जन्म मर्ण मूकायवा. हणे जे पृथिवीकाय ।
कह्या अहित अबोध तसु, प्रथम अङ्ग रे मांय ॥ ४ ॥
धर्म हेतु जन्तु हणे, दोष इहां नहीं कोय ।
ए अनार्य नूं वचन, आचारंगे जोय ॥ ५ ॥
जिनाज्ञा सावद्य सहु. वचन मात्र पिण सोय ।
मुझ नै आचरवा नहीं, प्ररूपवा नहीं कोय ॥ ६ ॥
महानिशीथ रै ग्रंथ मे, कमल प्रभाः इम ख्यात ।
सावद्य पाप सहित में, धर्म पुण्य किम थात ॥ ७ ॥

ग्रन्थ सघ पट्टक कियो, जिनवल्लभ सूरेश ।
जिन प्रतिमा यात्रा भणी, किस्यूं कह्यो छै तेश ॥ ८ ॥
लोहना कांटा ऊपरे, मांस डलो प्रति ताहि ।
मूंको पकड़े मीन ने, धीवर नर जग मांहि ॥ ९ ॥
तिम जिन बिम्ब जिन नाम करि, मुग्ध लोक जे मीन ।
जिन यात्रादि उपाय करि, कुगुरू, ठगत मत हीन ॥१०॥

॥ काव्य ॥

अथ जिन वल्लभ सूरि कृत संघ पट्टानी काव्य ।

आकृष्टुं मुग्धमीनान् बडिशपिशितवद्विंबमादृश्यं जैनं । तन्नाम्ना रम्यरूपान पवर कमठान् स्वेष्ट सिद्धयै विधाप्य ॥ यात्रा स्नात्राद्युपायै र्नमसितक निशा जागराद्यै श्छलेश्च । श्रद्धालुर्नामजैने श्छलित इव शठै र्वंच्यतेहाजनोऽयम् ॥२१॥

॥ दोहा ॥

भस्म ग्रह करिके बलि, दशम् पछेर करेह ।
मिथ्या मत कह्यु संघपट्टे, जिन वल्लभ सूरेह ॥११॥
इन्दु बिम्ब प्रति बाल बिन, ग्रहिवूं कुण वंछेह ।
तृतीय काव्य भक्तामरे, न्याय विचारी लेह ॥१२॥
तिमहिज जे जिन बिम्ब प्रति, जिन जाणी ने जेह ।
बाल अजाण बिना कवण, अङ्गीकृत करेह ॥१३॥
द्रव्य पूजा सावद्य छै, कै निरवद्य आख्यात ।
उत्तर हिये विचारिये, छोडी ने पखपात ॥१४॥

निरवद्य छै तो मुनि करै, ग्रही सामायक मांय ।
ते पिण द्रव्य पूजा करै, तुझ श्रद्धा रै न्याय ॥१५॥
जो सावद्य द्रव्य पूजा हुवे, तिण सूं मुनि न करेह ।
तो सावद्य मांही धर्म पुन्य, कीम कहीजे तेह ॥१६॥
आरम्भ जे छःकाय नूं, पचण पचावण जास ।
निज वा पर अर्थे क्रिया, निन्दूं गरहूं तास ॥१७॥
इम कह्यूं बन्देतू विषे, सप्तम गाथा जोय ।
तो साहम्मी वच्छल विषे, धर्म पुण्य किम होय ॥१८॥

॥ इति ॥

॥ अथ बन्देतु नीं गाथा ॥ छक्काय समारम्भे, पयण पयावण जे दोसा ॥ अत्तट्ठा परट्ठा ए, उभयट्ठा चेव तं निन्दे ॥

॥ इति धर्मार्थ हिन्साधिकार ॥

॥ अथ आठमो सुर्याभाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै सुर्याभसुर, प्रतिमा पूजी ताम ।
तिहां हित सुखम पाठ है, निसिस्साए अनुगाम ॥ १ ॥
ते निसिस्सा नूं अर्थ तो, मोक्ष अमर पद होय ।
ते माटे शिव हेतु ए, तसु उत्तर हिव जोय ॥ २ ॥

राय प्रश्रेणी से कह्यु, जे सुर्याभ सु देव ।
उपजियो तब चिन्तव्यूं, मन मांहि स्वयमेव ॥ ३ ॥
स्युं मुझ ने करिवो हिवे, पहिलां पछे ज काज ।
स्युं मुझ पहिलां श्रेय जे, श्रेय पुन पछे समाज ॥ ४ ॥
स्युं मुझ पहिलां ने पछे, हित सुखम निस्सेसाहि ।
अनुगामी केडे हुइ, इम चिन्तव्यो मन मांहि ॥ ५ ॥
सामानिक परिषध सुरे, जाणी ए अध्यवसाय ।
कर जोड़ी सुर्याभ प्रति, बोल्या एम बधाय ॥ ६ ॥
जिन प्रतिमा दाढां प्रते, आप भणी अवलोय ।
अन्य बहु वैमानिक सुरा, सुरी प्रते पुन जोय ॥ ७ ॥
अरचण जोगज जाव पुन, सेवा जोगज जेह ।
ते माटे पहिलां पछे, तुम ने करिवुं एह ॥८॥
पहिलां पछेज ए श्रेय, पूर्व पच्छा पिण जोय ।
हित सुखम निस्सेसाए हुँ, अनुगामिक अवलोय ॥ ९ ॥
इम सांभल सुर्याभसुर, हृष्ट तुष्ट सलहीज ।
यावत विकस्यो हृदय पुन, ऊठ्यो सेझ थकीज ॥१०॥
पवर सभा उपपात थी, निकली द्रह विषेह ।
आवी ने ते द्रह प्रते, तथा प्रदक्षिण देह ॥११॥
द्रह मे ऊतर स्नान करे, जिहां सभा अभिषेक ।
तिहां आवी सिंघासणे, बेठो पूर्व सन्मेख ॥१२॥

सामानिक परिषध प्रमुख, सुर सुर्याभ प्रतेह ।
अष्ट सहस्र ने चौसठ फुन जल भरिया कलशेह ॥१३॥
इन्द्राविषेक करी कहै, सुरगण में जिम इन्द्र ।
तारागण में चन्द्र जिम, असुर विषै चमरिन्द्र ॥१४॥
नाग विषै धरणिन्द्र जिम भरत चक्री मनु मांहि ।
बहु पल्योपम लग तुम्हे, बहु सागरोपम ताहि ॥१५॥
च्यार सहस्र सामानिका, यावत सोल हजार ।
आतम रक्षक देवता, तेह तणो अवधार ॥१६॥
अधिपति फुन स्वामी पणो, करता थकांज सोय ।
पालन्ता विचरो तुम्हे, इम कहै सुर अवलोय ॥१७॥
अलंकार सभा तिहां, आवी करे अलंकार ।
आवी व्यवसाए सभा, पुस्तक बांच तिवार ॥१८॥
पछे आय सिद्धायतन, प्रतिमादिक पूजेह ।
सूत्रे विस्तार छे बहु, इहां कह्यु संखेपेह ॥१९॥
इम प्रतिमा दाढां मनग, पूतलियांदिक पेख ।
बहु बाना पुजा तिणे, स्वर्ग स्थित थी देख ॥२०॥
ऊपजियो सुर्याभ तब, चिन्तवियो मन जोय ।
पूर्व पछे करिवुं किस्युं, मुझ पूर्व पछे स्युं श्रेय ॥२१॥
जेह कार्य कीधे छते पूर्व पछे स्युं सोय ।
हित सुख प्रमुख भणी हुइ, इम चिन्तवियो सोय ॥२२॥

धर्म कार्य तो जाणतो, समदृष्टि थो जेह।
तेह तणूं स्युं चिन्तवे, किम तसु अमर वदेह ॥२३॥
पिण राज बेसतां कृत्य जे करिवूं पूर्व पछेह।
तेह कार्य संसार ना, मंगल हेतु कहेह ॥२४॥
तेह रीत नवी जाणतो, नवो ऊपनो एह।
तिणस्यूं चित्यो मुझ किस्युं, करिवो पूर्व पछेह ॥२५॥
एह भाव सुर्याभ ना, सामानिक सुर धार।
वलि परिषधना देवता, जाण लिया तिण वार ॥२६॥
ए जूना था ते भणी, राज बेसतां ताय।
कारज करवो तेहनां, जाण हुन्ता अधिकाय ॥२७॥
ते माटे सुर स्थिति हुन्ती, ते दीधी तिणे बताय।
जिन प्रतिमा दाढां भणी, कह्यो पूजवुं ताय ॥२८॥
स्वर्ग रीत जाणी कह्युं, सुर सुंर्याभ प्रतेह।
पूजा हित सुख प्रमुख पिण, प्रभु न कह्या वच एह ॥२९॥
पुव्वी पच्छा पाठ त्यां, पहिलां पछे सुजोय।
हित सुख आदि कह्यो सुरे, पिण पेचा पाठ न कोय ॥३०॥
पूर्व पच्छा ते इह भवे, द्रव्य मंगल कहिवाय।
विघ्नोपशम अर्थे किया, राज बेसतां ताय ॥३१॥
श्रावक तुगिंया ना स्थविर, वन्दन जातां कीध।
सरिषव द्रोवाक्षत दही, द्रव्य मंगलीक प्रसिद्ध ॥३२॥

उत्तराध्ययन बावीसमें, द्रव्य मंगल संवाद ।
तोरण जातां नेम कृत, दधि अक्षत द्रोवादि ॥३३॥
तिमहिज सूर्याभे करी, संसारिक मंगलीक ।
पूजा जिन प्रतिमादिनी, स्वर्ग स्थिति तहतीक ॥३४॥
प्रभू वन्दन अवसर कह्यूं. पेचा हित सुख आदि ।
पेच्चा ते पर भव विषे, देखो तत्र असमाधि ॥३५॥
प्रतिमा त्यां पूर्व्वी पच्छा, फुन वन्दन जिन राय ।
पेच्चा पाठ कह्यो तिहां, राय प्रश्नणी मांय ॥३६॥
पंचमा अंग टूजे शतक, प्रथम उद्देशक पेख ।
खन्धक दीक्षा अवसरे, इह विध कह्यु विशेष ॥३७॥
धन काढे ग्रही लाय थी, पच्छा पुरा ए ताय ।
बंछित काल थको पछे, फुन पहिलां कहिवाय ॥३८॥
ते ग्रही जाणे मुझ हुसी ए धन हित सुख काज ।
क्षम समरथ निस्सेसाय जे. फुन अनुगामिक साज ॥३९॥
तिम जरा मरण री लाय थी, खात्म काढ्यां ताय ।
पर लोकि हित सुख भणी, वलि मुझ क्षम निस्सेसाय ॥४०॥
मेघ कह्यु धन लाय थी, काढ्यां पूर्व पश्चात् ।
हित सुखक्षम निस्सेसाय फुन, पिणपेच्चा पाठ न ख्यात ।४१।
तिम जरा मर्ण री लाय थी, खात्म काढ्यां सोय ।
हुसी निछेद संसार नूं, ज्ञाता प्रथम सु जोय ॥४२॥

प्रतिमा नी पूजा तिहां, लाय थकी धन बार।
काढे तिहां पच्छा प्रथम, ते इह भव में धार ॥४३॥
जिन वन्दन पेचा कह्युं, चारित ग्रह्यां परलोग।
ते परभव हित सुख प्रमुख, देखो दे उपयोग ॥४४॥
कोई कहै प्रतिमा तणी, पूजा छे निरदोष।
हित सुख खम निस्सेसाए कह्युं, निस्सेसाय ते मोक्ष ॥४५॥
तसु कहिये धन लाय थी, काढे तसु पिण सोय।
हित सुख खम निस्सेसाए कह्युं, इहां मोक्ष स्यूं होय ।४६।
धन काढे जे लाय थी, इह भव पूर्व पश्चात।
दारिद्र थी मूंकायवो, ते मोक्ष दारिद्र नी ख्यात ॥४७॥
तिम पूजा मंगलिक अरथ, इह भव पूर्व पश्चात।
विघ्न थकी मूंकायवो, ते मोक्ष विघ्न नी ख्यात ॥४८॥
शतक पनरमें भगवती, आणंद थिवर प्रतेह।
गोशाले जे वणिक नूं, आख्युं दृष्टान्त देह ॥४९॥
चौथो वल्गू फोडतां, वृद्ध पुरुष तिहवार।
फोडक हाला पुरुष नूं, हित सुख वंछणहार ॥५०॥
पथ्य आनन्द कारण तणूं, वंछणहारो तेह।
अनुकम्पा कारक तिको, निश्चय यश वंछेह ॥५१॥
निस्सेसाए नूं अर्थ जे, आख्यो वृत्ति विषेह।
वंछे मोक्षज विपतनी, विपत मूंकायवूं जेह ॥५२॥

तिम प्रतिमा पूजे तिहां निस्सेसाय आख्यात ।
विघ्न तणो ए मोक्ष है, विघ्न सूं कायवूं ख्यात ॥५३॥
ए द्रव्य मंगल राज बैसतां, जे जग मांहि गिणेह ।
विघ्न पड़े नहीं राजमें, दधी अक्षत जिमि जेह ॥५४॥
कोई कहै प्रतिमा तणी, पूजा थी कहिवाय ।
अनुगामियाए कह्यु, फल तसु केड़े आय ॥५५॥
तसु ,कहिये धन लाय थी, काढे तसु पिण सोय ।
अणुगामियाए इसो, पाठ सरीसो जोय ॥५६॥
जे धन काढे लाय थी, इह भव पूर्व पश्चात ।
तसु फल धन काढण तणुं, जिहां जाय तिहां आत ।५७।
विमान अधिपति अभव्य था, स्वर्ग तणी स्थिति मंत ।
सहु सुर्याभ तणी परे, प्रतिमांदिक पूजन्त ॥५८॥
तिम पूजा प्रतिमा तणी, ए भव पूर्व पश्चात ।
तसु फल द्रव्य मंगल तणुं, जिहां जाय तिहां आत ।५९।
शुभ सूचक संसार में, दधी अक्षत द्रोबादि ।
तिम पिण ए सुरलोक में, शुभ सूचक संवाद ॥६०॥
भाषा श्री जिनरायनी, गावे विवाह विषेह ।
तिम पूजा प्रतिमा तणी, वलि णमोत्थूणं गुणेह ॥६१॥
राज बेसतां कार्य्य जे, सहु संसारिक हेत ।
स्वर्ग स्थिति माटे किया, धर्म पुण्य नहीं तेथ ॥६२॥

कोई कहे पूजा कियां, ए भव विघ्न मिटेह ।
पुण्य बंध किम नवि कहो, हिव तसु उत्तर लेह ॥६३॥
चढ्यो सूर संग्राम मे, कर बहु जन संहार ।
आव्यूं जीत फते करी, सुयश करे नर नार ॥६४॥
सावद्य युद्ध तिणे करी, अशुभ कर्म बंधाय ।
ते अशुभ कर्मैं करी, सुयश हुवे किम ताय ॥६५॥
नाम कर्म नी प्रकृति, यशो कीर्ति पुन्य जेह ।
ते तो पाछल भव बंधी, वर शुभ योग करेह ॥६६॥
ते यशो कीर्त्ति पुण्य प्रकृति, युद्ध समय सुविचार ।
उदय आवी तिण कारणे, सुयश करे नर नार ॥६७॥
जन बहु जाणे युद्ध थी, सुजश यथा जग मांहि ।
पण नहीं जाणे पूर्व बन्ध, पुण्य थकी जश पाय ॥६८॥
तुङ्गिया ना श्रावक किया, विघ्न हरण रे काज ।
दधी अचत द्रोवादि जे, धूमहिज नेम समाज ॥६९॥
दधी अचत द्रोवादि करी, अशुभ कर्म बंधाय ।
विघ्न मिटे किम तेहथी, किम सुख सम्पति पाय ॥७०॥
विघ्न मिटे अरि जन हटे, सुख सम्पति पामेह ।
ते पुण्य प्रकृति पूर्व भवे, बंधी शुभ जोगेह ॥७१॥
ते पुण्य प्रकृति कदा, मङ्गल कियां पकेह ।
उदय आयां सुख सम्पजे, वलि बहु विघ्न मिटेह ॥७२॥

जन जाणे मङ्गल थकी, हित सुख प्रमुख जे पाय।
पण नहीं जाणे पूर्व बंध, पुण्य थकी ए थाय ॥७३॥
पुत्रादिक परणायवे, बारा मोसर आदि।
सुयश हुवे ते पूर्व बन्ध, पुण्ये करो सम्वाद ॥७४॥
ब्रह्मा विष्णु महेश फुन, देवी पूजा आदि।
कीधां सुख सम्पति मिले, ते पूर्व पुण्य प्रसाद ॥७५॥
महा आरम्भ महा परिग्रही, करे पचेन्द्री घात।
मास भच्चण ए चिहुं थकी, नरकायु बन्धात ॥७६॥
नरके पंचेन्द्रिय पणो, पुण्य प्रकृति छे जेह।
ते तो छे पूर्व बन्ध्यो, वर शुभ जोग करेह ॥७७॥
पण महा आरम्भ आदि जे, चिहुं कारण करि जोय।
पंचेन्द्री पणूं नहीं बंधे, न्याय हिये अवलोय ॥७८॥
तिम प्रतिमा पूज्यां छतां, हित सुख प्रमुख न थाय।
पूर्व बंधे पुण्ये हुवे, हित सुख खम निस्सेसाय ॥७९॥
वर सुर्याभ विमान नो, अधिपति देव किंवार।
मिथ्यादृष्टि पिण हुवे, भव्याभव्य विचार ॥८०॥
जे सुर्याभे सांचवी, तेहिज रीत तिंवार।
राज बेसतां सांचवे, विमान अतिपति धार ॥८१॥
प्रतिमादिक पूजे तिके, वलि नमोत्थूणं गुणेह।
तिण सूं ए स्थिति स्वर्ग नो, मंगलीक हेतेह ॥८२॥

बहु सागर सुर सुरी तणूं, अधिपति पणो करेह।
ए पिण बच है देव नूं, देखो पाठ विषेह ॥८३॥
आयू जे सुर्याभ नूं, च्यार पल्योपम ख्यात।
बहु सागर लग किम रहै, पेखो तज पखपात ॥८४॥

॥ गीतक छन्द ॥

प्रतिमा तणो पूजा तिहां सुर्याभ ने सुर आखियो। पुव्वी अने पच्छा हियाए आदि पाठ सुभाखियो॥ पुव्वी पच्छा ते इह भवे संसार ना मंगलोक हो। तुङ्गियादि ना जिम विघन हरवा। द्रोब सरसव तिम वही ॥ १ ॥ सुर्याभ जिन वन्दन तणो मन मांहि धारो छे तिहां। पेच्चा हियाए पाठ आदज प्रगट अन्तर ए जिहां। पेच्चा तिको परभव विषे हित सुख प्रमुख पहिछाणवूं। पच्छा अने पेच्चा उभय नु अर्थ दिल में आणवूं ॥ २ खंधक कह्यो धन लाय थी काढे तिको चिन्ते सही। पच्छा पूराए हिया सुहाए आदि पाठ सु प्रगट ही। तिम जरा मरणज लाय थी निज आत्म प्रति काढ्यां थकै। मुझ हुसे परलोकि हियाए। प्रमुख पाठ कह्या तिकै ॥३॥ प्रतिमा तणी पूजा अने धन लाय थी काढे वही। पच्छा हियाए पाठ छै पिण पेच्चा वा परभव नहीं। सुर्याभ जिन वन्दन अने जे खन्धके दीक्षा ग्रही। पेच्चा

तथा परभवे एहवुं पाठ पिण पच्छा नहीं ॥ ४ ॥ चम्पा तणा जन वृन्द जिन वन्दन समय ए विध कही । प्रभु वन्दतां फल पेच्चा भव वा इह भव हित सुख प्रमुख ही । फुन तुङ्गिया ना श्रावके पिण स्थविर वन्दन समय ही । फल वन्दना नूं इह भवे वा परभवे होसि सही ॥५॥ शिवराज ऋषि फुन ऋषभ दत्ते कह्यूं प्रभू वन्दन तणूं । फल इह भवे वा पर भवे हित सुख प्रमुख हुसे घणूं । इम जिन मुनि प्रते वन्दवे फल पेच्चा वा परभव कही । पिण पाठ पच्छा शब्द किहां ही सूत्र मे दाख्यो नही ॥ ६ ॥

॥ इति सुर्याभाधिकार ॥

॥ अथ नवमूं चैइट्ठी निज्झराट्ठी शब्दार्थ अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै प्रतिमा तणो, व्यावच करवी सार ।
भाखी दशमा अङ्ग में, तीजे संवर द्वार ॥ १ ॥
उत्तर तसु निसुणो हिवे, तिण ठाणे इमवाय ।
आराधै ए तृतीय व्रत, ते कहवुं मुनिराय ॥ २ ॥

उपधि भात पाणी जिको, प्रतीत घर थी आण ।
संग्रह करिवूं कुशल वलि, कुशल दान में जाण ॥ ३ ॥
ते क्षेहने आपे तिको, अत्यन्त गाढोबाल ।
दुरबल ते बल रहित जे, वलि ग्लान मुनि न्हाल ॥४॥
वृद्ध तिको कहिये स्थिविर, खमग मास खमणादि ।
प्रवर्त्तावे जे योग्य तिम, प्रवर्त्तक ते सम्वाद ॥ ५ ॥
आचारज उवझाय फुन, नव शिष्य साधर्मीक ।
तपसी कुल गण संघ ए, तसु व्यावच तहतीक ॥ ६ ॥
कुलते गच्छ समुदाय छै, चन्द्रादिक कहिवाय ।
गण ते कुल समुदाय छै, संघते गण समुदाय ॥ ७ ॥
सूतलानो व्यावच करै, चैत्य ज्ञान अर्थेह ।
निरजरानूं अरथी छतो, कर्म चयां थी तेह ॥ ८ ॥
पूजा स्लाघा रहित चित्त, दश विध बहु विध जेह ।
करै व्यावच तृतीय वरत, आराधे मुनि तेह ॥ ९ ॥
अप्रतीतकारी घर विषे, प्रवेश न करै जान ।
अप्रतीतकारी घर तणूं, नहीं लेवे अन्न पाण ॥१०॥
इहां कह्युं जे उपधि करि, वलि भत्त पाण करेह ।
अत्यन्त बाल प्रमुख तणी, करै व्यावच तेह ॥११॥
कोई कहै प्रतिमा तणी, व्यावच करवी स्यात ।
तो प्रतिमा रे ये किहूं, वस्तु काम न आत ॥१२॥

प्रतिमा अन्न खाती नथी, पीती नथी ज पाण।
वस्त्र ओढती पिण नथी, नथी पहरती जाण ॥१३॥
ते माटै इम सम्भवै, चैत्य ज्ञान अर्थेह।
निरजरा नूं अर्थी छतो, करै वियावच जेह ॥१४॥
चैत्य ज्ञान अर्थे करै, एक अर्थ ए होय।
द्वितीय अर्थ कहिए हिवै, सांभलजो भवलोय ॥१५॥
आराधै ए तृतीय व्रत, ते केहवुं मुनिराय।
इम शिष्य प्रश्न किये छतें, हिव गुरु भाषै वाय ॥१६॥
उपधि भात पाणी जिको, प्रतीत वर थी थाय।
संग्रह करिवा में कुशल, कुशल दान में जाण ॥१७॥
ते केहने आपे तिको, अत्यन्त गाढो बाल।
दुर्बल रोगी वृद्ध फुन, खमग प्रवर्त्तक न्हाल ॥१८॥
आचारज उवज्झाय शिष्य, साधर्मीक पिछाण।
तपसी कुल गण संघ ए, चैत्य तिको जिन जाण ॥१९॥
पूर्व कह्या ते सर्व नूं, अर्थ प्रयोजक जेह।
निरजरानूं अर्थी छतो, करै वियावच तेह ॥२०॥
पूजा श्लाघा रहित चित, दश विध आचार्यादि।
वहु विध भत्त पाणादि करि, करै अनेक प्रकार सम्वाद २१
चित्त अह्लादक ते भणी, चैत्य कीनली जाण।
भात पाणी तसु आणि दे, वलि उपधादिक दे आण ।२२।

सूत्र भगवती में कह्यो सीहो मुनि सुजाण ।
पाक बीजोरा वीर प्रति, वहरी आण्या आण ॥२३॥
अन्य केवली तेहने, उपधादिक दे आण ।
आराधे इम तृतीय व्रत, महा मुनि गुण खान ॥२४॥
राय प्रश्रेणी में कह्या, वीर तणा चिहुं नाम ।
कल्याणं मंगल वलि, दैवत चैत्य सु ताम ॥२५॥
मलियागिरि कृत वृत्ति में, अर्थ इसो आख्यात ।
कल्याणकारी ते भणी कल्याणिक जगनाथ ॥२६॥
दुरित विघ्नज तेहना, उपशमकारी स्वाम ।
ते माटे जगनाथ ने, कह्यो मंगलं ताम ॥२७॥
तीन लोकना अधिपति, तिणसूं दैवत ख्यात ।
हेतु सुप्रसन्न मन तणा, तिणसूं चैत्य सुजात ॥२८॥
चैत्य शब्द नूं अर्थ इम, आख्यो छै तिण स्थान ।
ते माटे ए चैत्य जिन, तास वेयावच जान । २९॥
मुनि नाए पिण नांम चिहुं, आख्या छै बहु ठाम ।
कल्याणकारी ते भणी, मुनि कल्याणिक नाम ॥३०॥
दुरितोपशमकारी पणे, मंगल मुनि कहिवाय ।
च्यार मंगल में देखल्यो, तीजो मंगल ताय ॥३१॥
दैवत कहतां देव ए, पञ्च देव मे ताहि ।
धर्म देव मुनि ने कह्या, सूत्र भगवती मांहि ॥३२॥

भव द्रव्य देव भवान्तरे, देव हुसी ते ताय।
चक्री ते नर देव हैं, धर्म देव मुनिराय ॥२३॥
देवाधि देव तीर्थंकरा, तिणसूं दैवत वीर।
तीन लोक ना अधिपति, युग केवल गुण हीर ॥२४॥
भाव देव चिहुं जाति ना, भवनपत्यादिक जेह।
बारम शतके भगवती, नवम उद्देश विशेह ॥२५॥
ते माटे ए चैत्य जिन, तास वेयावच ताम।
निरजरा नूं अर्थी छतो, करे मुनि गुण धाम ॥२६॥
कोई कहै ए चैत्य नूं, अर्थ इहां जिन होय।
तो केहड़े ए किम कह्युं, तसु उत्तर हिव जोय ॥२७॥
चैत्य तुम्हे प्रतिमा कहो, तो केहड़े किम ख्यात।
तुम लेखे तो धुर कहो, पछे अन्य मुनि आत ॥२८॥
जिन प्रतिमा जिन सारषी, तुम्हे कहो छो सोय।
ते माटे ए आदि में, कहिवुं चैत्य सु जोय ॥२९॥
इहां बाल अत्यन्त धुर, दुर्बल ग्लान पश्चात।
स्थिवर प्रवर्तक धुर कही, पछे आचारज ख्यात ॥४०॥
आचार्य्य पद तो प्रथम, कहिवुं धुर अहलाद।
ठाम ठाम व्यावच विषे, आचारज पद आदि ॥४१॥
इहां प्रथम बालादि कही, पछे आचारज जोय।
तेहनुं कारण को नहीं, देखो दिल अवलोय ॥४२॥

तिमहिज ष'ते चैत्य जिन, इहां भाख्यु' छे सोथ।
तेहनुं पिण कारण नहीं, हिये विचारी जोय ॥४३॥
मुनि ब्रह्मचारी पणा थकी, प्रथम कह्या अणगार।
पछे चैत्य ते जिन कह्या, तसु नही दोष लिगार ॥४४॥
गिणूं अनूपूर्वि तुम्हे, पद तसु इकमय बीस।
पच्छानुपूर्वि विषे, पहला मुनि जगीस ॥४५॥
उवभाया आचार्य सिद्ध अरिहन्त अन्त कहेह।
अनानुपूर्वि विषे, आघा पाछा लेह ॥४६॥
अनुयोगद्वारे आखियो, पूर्वानुपुर्वि जान।
पच्छानुपूर्वी वलि, अनानुपूर्वि आन ॥४७॥
पूर्वानुपूर्वि तिहां, ऋषभ जाव वर्द्धमान।
महावीर यावत् ऋषभ, पच्छानुपूर्वि जान ॥४८॥
आघा पाछा नाम ले, अनानुपूर्वि तेह।
ए त्रिहुं अनुपूर्वि कही, देखोजी चित देह ॥४९॥
सामाचारी दश विध कही, अनुयोगद्वार विषेह।
इच्छा मिच्छा धुर अखी, पूर्वानुपूर्वि एह ॥५०॥
उत्तराध्ययन छव्वीसमें, आवस्सिया धुर जोय।
अनानुपूर्वि एह छे, तसु दोषण नहीं कोय ॥५१॥
ज्ञान दर्शन चारित्र तप, शिव मग ए चिहुं सार।
उत्तराध्ययन अट्ठवीसमे, प्रथम ज्ञान सुविचार ॥५२॥

तिणहिज अध्ययनं किया, रुचि दर्शन ज्ञान चरित्त ।
इहां दर्शन धुर आखियो, तसु कारण न कथित ॥५३॥
अभिणि वोधिक धुर कही, पछे कह्यो श्रुत ज्ञान ।
भगवती आदि विषे प्रभू, प्रगट पाठ पहिचान ॥५४॥
उत्तराध्ययन 'अट्ठवीसमें, कह्यो प्रथम श्रुत ज्ञान ।
अभिणि बोध कह्यो पछे, तसु दोषण नहीं जान ॥५५॥
पूर्वानुपूर्वि किहां, किहां द्वितीया अवलोय ।
अनानुपूर्वि कही किहां, तसु दोषण नहिं कोय ॥५६॥
पञ्च ज्ञान में देखलो, छेहड़े केवल ज्ञान ।
छेहड़े दर्शन च्यार में, केवल दर्शन जान ॥५७॥
च्यार ध्यान मांहि वलि, छेहड़े शुक्ल ध्यान ।
छेहड़े गुणठाणा मझे, अजोगी गुणस्थान ॥५८॥
छेहड़े त्रिहु विध देव में, वेमानिक सुर ख्यात ।
चारित्र में छेहड़े कह्यु, यथाख्यात जगनाथ ॥५९॥
वलि षट नियंठा ने विषे, छेहड़े स्नातक जान ।
इत्यादिक बहु सूत्र में, भाष्या श्री भगवान ॥६०॥
अनानुपूर्वि करी, इहां चैत्य जिन अन्त ।
उपधि भात पाणी करी, तसु व्यावच मुनि करन्त ॥६१॥
आराधे इम तृतीय व्रत, महा मोटा मुनिराय ।
द्वितीय अर्थं ए आखियो, निमल बिचारो न्याय ॥६२॥

चैत्य ज्ञान धुर अर्थ कह्यु, द्वितीय अर्थ जिन जोय।
वलि केवल ज्ञानी वदे, तेहिज सत्य सुहोय ॥६२॥

॥ इति चेइहो निज्भराहो शब्दार्थ नूं अर्थ ॥

॥ अथ दशमूं चमर सुधर्मागत अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे असुरेन्द्र जे, स्वर्ग सुधर्में आय।
त्यां प्रतिमा नूं शरण कह्यु, तसु उत्तर कहिवाय ॥ १ ॥
सूत्र भगवती तृतीय शत, द्वितीय उद्देशा मांय।
चमर वीर नूं शरण ले, स्वर्ग सुधर्में आय ॥ २ ॥
जई सुधर्में शक्र प्रति, बोल्यो निरुई बान।
शक्र कोप कर मूंकियो, वज्र सु जाज्वलमान ॥ ३ ॥
पछे इन्द्र विचारियो, विन नेश्राय सुयोय।
आवे चमर सुधर्म ए, इसो शक्ति नहिं होय ॥ ४ ॥
अरिहन्त अरिहन्त चैत्य पुन, भावितात्म अणगार।
आवे ए तिहुं शरण ले, चमर सुधर्में धार ॥ ५ ॥
ते माटे महा दुःख ए, अरिहन्त नी अवलोय।
भगवन्त ने अणगार नी, अति आशातन होय ॥ ६ ॥

इम चिन्तव अवधे करी, प्रभु कहै मुझ प्रति देख ।
शीघ्र गमन कर संचर्यो वज्र प्रती सुविशेष ॥ ७ ॥
इहां तिहुं शरणा में प्रथम, अरिहन्त केवल धार ।
अरिहन्त चैत्य छद्मस्थ जिन, तिहुं ज्ञानी सुविचार ॥८॥
भावितात्म अणगार फुन, यह तिहुं शरणे मन्त ।
इहां चैत्य ते ज्ञानवन्त, तिहुं ज्ञानी भगवन्त ॥ ९ ॥
बलि मन शक्र विचारियो, अरिहन्त नी अवलोय ।
भगवन्त ने अणगार नी, अति आशातन होय ॥१०॥
चैत्य स्थान भग शब्द कह्यो, भग नुं अर्थ सुज्ञान ।
तिहुं ज्ञानी अरिहन्त ए, पिण प्रतिमा नहिं जान ॥११॥
कोई शरणा तो त्रण कहै, आशातन कहै दोय ।
अरिहन्त ने प्रतिमा तणी, एक कहै छै सोय ॥१२॥
शरण विषे तो पाठ त्रण, आशातन में जोय ।
दोय पाठ हाल्या हुंता, तो आशातन बे होय ॥१३॥
शरण विषे तो पाठ त्रण, आशातन में जोय ।
तीन पाठ छै ते भणी, आशातना त्रण होय ॥१४॥
प्रत्यक्ष सूत्र शरणा तिहुं, कही आशातना तीन ।
अरिहन्त ने भगवन्त नी, बलि मुनि तणी कथीन ॥१५॥
तीन आशातन ने विषे, चैत्य शब्द नहीं ख्यात ।
चैत्य ठिकाणे भग कह्युं, देखो तज पखपात ॥१६॥

अरिहन्त ने प्रतिमा तणो, मुनिनो शरण जु थाय।
तो छद्म जिन नुं शरण ग्रह्यु, ते किण शरणा मांय ।१७।
अरिहन्त तो केवल धरा, तेह विषे सुविचार।
जिन छद्मस्थ तणो शरण, आवै किण विध सार ॥१८॥
जिन प्रतिमा नूं शरण कहै, तिण में पिण नहीं आय।
तृतीय शरण जिन बिन मुनि, किम तिण विषे कहाय।१९।
तिण सुं छद्म जिन तणूं, द्वितीय शरण ए होय।
जो प्रतिमा नुं शरण हुवै, तो किम आवे मनु लोय ॥२०॥
सभा सुधर्मो थी निकट, सिद्ध आयतन जाय।
जिन प्रतिमा नुं शरण तो, ग्रहण करन्तो ताय ॥२१॥
ते माटे इहां चैत्य नुं, अर्थ ज्ञान अवलोय।
अन्य ठाम पिण चैत्य नुं, अर्थ ज्ञान कह्यु सोय ॥२२॥
चौबीस तीर्थंकर तणा, चैत्य रूंख चौबीस।
समवायङ्ग विषे कह्या, ए ज्ञान रूंख सु जगीस ॥२३॥
चैत्य ज्ञान केवल लह्यु, जिण तरु तल जिनराय।
चैत्य वृक्ष ए आखवा, ए ज्ञान वृक्ष कहिवाय ॥२४॥
तिमहिज अरिहन्त चैत्य प्रति, चिहुं ज्ञानी अरिहन्त।
द्वितीय शरण ए आगवो, देखोजो मतिवन्त ॥२५॥
द्वितीय आशातन नै विषे, चैत्य स्थान भगवन्त।
इहां अर्थजे भग तणो, कहिए ज्ञान सुतन्त ॥२६॥

ते माटे अरिहन्त नी, प्रतिमा नी अवलोय।
शरण कहे छे ते इहां, नथी संभवे सोय ॥२७॥

॥ इति चमर सुधर्मागत अधिकार ॥

॥ अथ इग्यारमूं वली कम्मा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे बलिकम्म शब्द, सूत्र विषे बहु स्थान।
तेह तणुं स्युं अर्थ है, हिव तसु उत्तर जान ॥ १ ॥
पञ्चमुद्देशे द्वितीय शत, तुङ्गिया तणा विचार।
श्रावक स्थिविर सु वांदवा, त्यार थया तिहवार ॥ २ ॥
स्नान करी वली कर्म कृत, तास अर्थ वृत्तिकार।
कीधो छे गृहदेवता, देखो हिये विचार ॥ ३ ॥
इमही उववाई में कह्यो, प्रवृत्ति वादुक कीध।
वलि कर्म स्व गृहदेवता, वृत्ति विषे सु प्रसिद्ध ॥ ४ ॥
केइक इहां गृहदेवता, जिन प्रतिमा कहे हेव।
पिण इतलो जाणे नहीं ए किम घरना देव ॥ ५ ॥
तीर्थंकर तो छे सही, तीन लोक ना देव।
ते किम जिन प्रतिमा भणी, घरना देव कहेव ॥६॥
जिन प्रतिमा जिन सारषी, इम पिण कहता जाय।
बलि स्थापे घर देवता, ए किण विध मिलसे न्याय ॥७॥

कदापि कुल देवी प्रते, कहिये घर ना देव।
लोकीक हेते पूजता, श्रावक पिण स्वमेव॥ ८॥
जेह देवता शब्द नित, स्त्री लिङ्ग वाची होय।
कह्यु अमर मे ते भणी, न्याय हिये अवलोय॥ ९॥
नवम उद्देशे सप्तशत, वर्णं कीध बली कर्म।
अर्थ देवता नूं कियो, वृत्ति विषे ए मर्म॥१०॥
बली कर्म नुं अर्थ धर्मसी, स्नान तणो ज विशेष।
कीधो बलि कर्म शब्द करी, आया कारज शेष॥११॥
ज्ञाताध्ययने दूसरे, सुत वंच्छा ने हेत।
नाग भूत यक्ष पूजवा, गई सुभद्रा तेथ॥१२॥
पुष्करणी में स्नान कर, कीधा बली कर्म जोय।
ए वाव मधे किण देवनी, प्रतिमा पूजी सोय॥१३॥
भीनो साड़ो ओढणो, एहवी कतीज तेह।
कमल बहु ग्रही नीकली, पुष्करणी थी जेह॥१४॥
बहु पुष्प गन्ध धूपणो, माल्य प्रमुख अवलोय।
कांठे जे मूक्या प्रथम, तेह ग्रही ने सोय॥१५॥
पछे नाग घर आय ने, प्रतिमा पूजी आम।
जाव वैश्रमण नी बलि, पूजी आखी ताम॥१६॥
बली कर्म पुष्करणी विषे, कीधो धुर आख्यात।
ते पुष्करणी ने विषे, किसा देवनी जात॥१७॥

॥ सोरठा ॥

मल्ली पिता ने पास रे, आवन्ता न्हाया कह्या ।
जाव शब्द में तास रे, बली कम्मा ए पाठ छे ॥१८॥
वलि मल्ली षट राजान रे, समझावा आवी तदा ।
जाव शब्द में जान रे, वली कम्मा ए पाठ छे ॥१९॥
देखो मली भगवान रे, प्रतिमा पूजी कोइनी ।
अध्ययन अष्टम् जान रे, भाख्यो ज्ञाता ने विषे ॥२०॥
वलीकम्मा नूं जाण रे, अर्थ कहे पूजा तणो ।
ए जिन प्रतिमा नी माण रे, के पूजा कुल देव नी ॥२१॥
जो स्थापे जिन विम्ब रे, तो मल्ली तीर्थंकर छतां ।
पूजे तेह अचम्भ रे, बली प्रतिमा किण जिन तणी ।२२।
जिन प्रतिमा नी ताय रे, मल्ली नाथ पूजा करी ।
तो भावे मुनि पाय रे, देखी प्रणमे के नहीं ॥२३॥
वलि अढीदीप रे म्हांय रे, भावे जिन उत्कृष्ट थी ।
इक सौ सित्तर थाय रे, जघन्य बीस थी नवि घटे ।२४।
त्यां द्रव्ये जिन घर मांय रे, भावे जिन वंदे के नहीं ।
वलि तसु वाण सुहाय रे, तसु लेखे किम नहिं सुणे ॥२५॥
मल्लिनाथ घर मांहि रे, जिन प्रतिमा पूजी कहे ।
तो द्रव्ये जिन पिण ताहि रे, भावे जिन वन्दे न किम ।२६।

जो स्थापे कुल देव रे, मल्लिनाथ पूजा करौ ।
सुर सहाय स्वयमेव रे, किम न करै श्रावक समकिती।२७।
स्नान तणुं ज विशेष रे, अर्थ कहै वली कर्म नूं ।
तो टलियो क्लेश अशेषरे, सहु ठाम विशेष स्नान नूं ।२८।

॥ दोहा ॥

भगवती नवमां शतक में, तेतीस में उद्देश ।
जमाली मंजन घरे, स्नान वली कर्म शेष ॥२९॥
अलंकार कर नीकल्यो, मंजन घर थी हेव ।
इण न्हावा ना घर विषे, किहवो पूज्यो देव ॥३०॥
देवा नन्दा ब्राह्मणी, बलि कर्म मंजन गेह ।
तिण न्हावा ने घर किसो, पूज्यो देव कहेव ॥३१॥
द्वितीय उपाङ्ग प्रदेशी नृप, देव पूजवा जाय ।
पहिलां न्हावा घर विषे, बलि कर्म कीधो ताय ॥३२॥
इण न्हावा ना घर विषे, किसो पूजियो देव ।
देव पूजवा तो हिवे, जावै छै स्वयमेव ॥३३॥
ज्ञाताध्ययने सोल में, द्रौपदी मंजन गेह ।
स्नान बली कर्म कौतुकः, पवर वस्त्र पहरेह ॥३४॥
मंजन घर सुं नीकली, आवी जिन घर मांय ।
इतरा सूधी पाठ छै, देख विचारो न्याय ॥३५॥

पहलां तो न्हावो कह्यो, पछे कह्यु वलि कर्म ।
पछे वस्त्र पहरया कह्या, हिव जोवो ए मर्म ॥३६॥
स्त्री जाति सुभाव नग्न, थई न्हावा बेठी जेह ।
त्यां न्हावा ना घर विषे, कोहवो पूज्यो देव ॥३७॥
बलि कर्म कर जिन घर विषे, प्रतिमा पूजी आय ।
तो बलि कर्म मंजन घरे, ते कोहनी प्रतिमा थाय ॥३८॥

॥ सोरठा ॥

अपात चिलाती न्हाय रे, काय बलि कम्मा पाठ त्यां ।
जम्बूद्वीप पन्नती मांय रे, किसो देव त्यां पूजियो ॥३९॥

॥ दोहा ॥

कोणिक जिन वन्दन गयो, कह्यो स्नान विस्तार ।
बलि कम्म शब्द ज मूलगो, नथी तिहां अवधार ॥४०॥

॥ अथ कोणिक जिन वंदवा गयो त्यां न्हावा नूं पाठ उववाई सूत्र में कह्यो ते लिखिये छै ॥

जेणेव मज्झण घरे तेणेव उवागच्छइ गच्छइत्ता मज्झन घरं अणुप्प-विसइत्ता समुत्ताजाला उलाभिरामे विचित्त मणिरयण कुट्टिमतले रम-णिज्जे पहाण मंडवं सि णाणामणिरयण भत्ति चित्तं सि पहाण पीढंसि सुहणिसणे सुद्धोदगेहिं गंधोदगेहिं पुप्फोदगेहिं सुभोदगेहिं पुणोरकल्ला-णग पवरमज्झण विहिए मज्झिपतत्थ कोउयसएहि बहुविहेहिं कल्लाणग-पवर मज्झणावसाणे पम्हल सुकुमालगंध कासाइय लूहियंगे सरस सुरहि

गोसीस चंदणोणु लित्तगत्ते अहय सु महग्घ दूसरयण सु संवए सुइ माला वण्णग विलेवण आविद्ध मणि सुवणे कप्पिय हारद्धहार तिसरथ पालंब पलंबमाणे कडिसुत्त सुकय सोहे पिणद्धगे विज्झे अङ्गुलिज्जे कल लियंगयं ललियं कया भरणे वरकडंग तुडिय थंभियभूय अहिय रूवसस्सिरीया मुद्दिया पिंगलंगुलिय कुंडल उज्जोवियाणणे मउड दित्त सरए हारोत्थए सूकयर इयव वत्थे पालंब पलंबमाण पडसुकय उत्तरिज्झे णाणामणि कणगरयण विमलमहरि हणिउणा नियमि समंसंति विरइय सु सिलिठ्ठ विसिठ्ठ लठ्ठ आविद्ध वीर वलये किं बहुणा कप्परुखए चेव अलंकिय विभूसिए नरवई सकोरंट मल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्झ माणेणं चउ चामर वालवीजयंगे मंगल जय सद्द कयालोए मज्झण घराउ पडिणिख्ख मइमक २ त्ता ॥ इति ॥

॥ सोरठा ॥

वली कर्म शब्दे जेह रे, पूजा जिन प्रतिमा तणी ।
तो कोणिक अधिकारेह रे, जिन वंदन समय ए न किम ।४१
जम्बूद्वीप पन्नती एम रे, भर्तेश्वर ना स्नान नूं ।
विस्तार कोणिक जेम रे, त्यां वली कम्मा पाठ नहिं ।४२।
स्नान तणो जिन स्थान रे, विस्तार पणे नवि वरणव्युं ।
त्यां वली कम्मा जाण रे, पाठ देख निरणय करो ।४३।
जलाञ्जलि प्रमुख रे, स्नान करंतो जे करै ।
कुरलादिक प्रत्यक्ष रे, स्नान विशेषण एह छे ॥४४॥
ते माटे अवलोय रे, वली कम्मा जी पाठ नूं ।
स्नान विशेषन सोय रे, अर्थ धर्मसी इम कियो ॥४५॥

वृत्तिकार कह्यु सोय रे, वली कर्म्म ते ग्रह देवता ।
तसु पूजा अवलोय रे, इहां कुल देवी सम्भवे ॥४६॥
स्नान विशेषन होय रे, वा पूजी ग्रह देवता ।
उभय अर्थ अवलोय रे, सत्य सर्वज्ञ वदे तिको ॥४७॥

॥ अथ असहेजाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

वलि कहै श्रावक समकिती, च्यार जाति ना देव ।
तास साभ्ह वंछे नहीं, सूत्र विषे ए भेव ॥४८॥
ते माटे वली कर्म्म ते, जिन प्रतिमा पूजन्त ।
पिण कुल देवी अर्थ नहिं इंव तसु उत्तर मन्त ॥४९॥

॥ सोरठा ॥

असहिज्झा पाठ नूं जाण रे, अर्थ दोय है वृत्ति में ।
आपद पड्यो सुजाण रे, साभ्ह न वंछे देव नूं ॥५०॥
पोते कीधा पाप रे, ते पोतेहिज भोगवे ।
अदीन मनोवृत्ति स्थाप रे, एक अर्थ तो इम कियो ॥५१॥
वलि पाखंडी आय रे, चलावे समकित आदि थी ।
तो नहीं वंछे सहाय रे, समर्थ स्वयमेव हटायवा ॥५२॥
वलि जिन शासन मांय रे, अत्यन्त भावित आसता ।
ते माटे असाय रे, अर्थ दूजो इम वृति में ॥५३॥

तुङ्गिया ने अधिकार, रे उभय अर्थ ये आखियो।
तास न्याय सुविचार रे, चित्त लगाई सांभलो ॥५४॥
दूजो अर्थ पहिचाण रे, समकित व्रत सैंठा पणो।
प्रबल मूल गुण जाण रे, एह अवश्य गुण चाहिजे ॥५५॥
ए गुण खण्डित थायरे, तो हुवे विराधक पांति में।
शुद्ध हुवां सुं ताय रे, आराधक पद आखियो ॥५६॥
जो पाखण्डी ने जेह रे, जाब देवा समरथ नहीं।
पर सहाय बिन तेह रे, तासु चलायो नवि चले ॥५७॥
तो पिण मूल गुण तास रे, तेहनुं न गयुं सर्वथा।
समकित व्रत नी राश रे, अखण्ड पणे राखी तिणे ।५८।
आपद पड़ियां आय रे, सुर सहाय वंछे नहीं।
ए धुर अर्थ कहाय रे, उत्तर गुण ते जाणवूं ॥५९॥
मुनि धुर पहिर सभाय रे, द्वितीय पहिर मे ध्यानवर।
तृतीय गोचरी जाय रे, चौथे पहिर सभाय फुन ॥६०॥
उत्तर गुण ए च्यार रे, कह्या विचक्षण मुनि तणे।
ज्यो न करे अणगाररे, तो संयम में भङ्ग नहीं ॥६१॥
तिम श्रावक रे एह रे, उत्तर गुण असहायता।
सुर सहाय वंछेह रे, तो समकित में भङ्ग नहीं ॥६२॥
सूत उववाई मांहि रे, अम्बड ने अधिकार पिण।
जाव शब्द में ताहि रे, असहेज्झा ए पाठ है ॥६३॥

तास अर्थ वृत्ति मांय रे, एक ईज कीधो अछे ।
आपद सुर असहाय रे, एह अर्थ कीधो नथी ॥६४॥
कुतीर्थिक प्रेरित्त रे, समकित सी अविचल पणो ।
पर सहाय नवि चित्त रे, उववाई वृत्ति में कह्यो ॥६५॥
राय प्रशेणी वृत्ति रे, असहेज्जा नूं अर्थ जे ।
कीधो अधिक पवित्त रे, चित्त लगाई सांभलो ॥६६॥
कुतीर्थिक प्रेरित रे, समकित सी अविचल पणो ।
पर सहाय नवि चित्त रे, यह अर्थ इक हिज तिहां ॥६७॥
आपद सुर असहाय रे, यह अर्थ कीधो नथी ।
कुतीर्थिक थी ताहि रे, न चले एहिज अर्थ त्यां ॥६८॥
आनन्दादिक सार रे, असहेज्जा पाठ कह्यो तिहां ।
छः छराडी आगार रे, देवाभिउगे पाठ मे ॥६९॥
अन्य तीर्थी ने धार रे, तथा देव जे तेहना ।
श्रद्धा भ्रष्ट अणगार रे, अन्य तीर्थी ग्रह्यो तेहने ॥७०॥
न करूं वन्दना ताहि रे, नमस्कार पिण नहिं करूं ।
पहलां बोलूँ नांहि रे, अशणादिक देवूं नहीं ॥७१॥
अभिग्रह एह विशेष रे, छः छराडी आगार त्यां ।
राजा ने आदेश रे, तथा कुटम्ब आदेश थी ॥७२॥
बलवन्त तणे प्रयोग रे, देव तणे परवश पणे ।
कुटम्ब बडा ने योग रे, अटवी विषेज कारणे ॥७३॥

ए षट तणो प्रकार रे, अन्य तीर्थादिक तिहुं भणी ।
वन्दे, करि नमस्कार रे, अशणादिक दे तेहने ॥७४॥
आपद उपजे आय रे, अथवा तेहना भय थकी ।
वांछे देव सहाय रे, जाणे सावद्य तेहने ॥७५॥
तसु समकित किम जाय रे, समकित तो श्रद्धा अछे ।
हिये विचारी न्याय रे, श्रद्धा कार्य्य जुवा जुवा ॥७६॥
छ: छण्डी बिन त्याग रे, ए पिण गुण अधिकाय छै ।
अधिकेरो वैराग रे, व्रत सांकडा जेहना ॥७७॥
इक, त्रस ना पच्चखाण रे, कीधां से श्रावक हुवे ।
शतक सतरमें जाण रे, द्वितीय उद्देशे भगवती ॥७८॥
अनर्थ दण्ड परिहार रे, ए आठमूं व्रत है ।
अर्थ तणो आगार रे, न्याय हिवे तेहनुं सुणो ॥७९॥
अर्थ दण्ड में एह रे, आठ आगारज आखिया ।
द्वितीय सुयगडांगेह रे, द्वितीय उद्देशे देखल्यो ॥८०॥
आत्म ज्ञात घर तेथ रे, परिवार ने मित्र कारणे ।
नाग भूत यक्ष हेत रे, हिन्सादिक आरम्भ करै ॥८१॥
अर्थ दण्ड रै मांहि रे, ए आठूं ही आखिया ।
नाग भूत यक्ष ताय रे, श्रावक रै आगार छै ॥८२॥
धारणी नो तिहवार रे, अकाले घन डोहला अर्थ ।
देखो अभयकुमार रे, ज्ञाता सुर आराधियो ॥८३॥

कृष्ण पिण सुविशेष रे, लघु बंधव रे कारणे।
देव आराध्यो देख रे, अन्तगड़ माहीं कह्यो ॥८४॥
चक्री भरत सु सोय रे, देवो देव भणी तिणे।
जम्बूद्वीप पन्नत्ती जोय रे, अट्ठम करि आराधियो ॥८५॥
वलि मूक्या छः बाण रे, नमस्कार सुर ने लिख्यो।
ए प्रत्यक्ष छो पहिछाण रे, बंछ्यो सहाय देवनूं ॥८६॥
वलि चक्री भरतेश रे, चक्र तणी पूजा करी।
द्रुमक्षिज सुर सपेख रे, पूजे स्वार्थ कारणे ॥८७॥
शान्ति कुंथु अर जाण रे, चक्र रतन पूज्यो के नां।
षट खण्ड साधतां माण रे, अट्ठम तेरा किया के नां ॥८८॥
लवण सुट्ठियो देव रे, कृष्ण पिण आराधियो।
ज्ञाता सोलमें भेव रे, सुर सहाय बंछ्यो तिणे ॥८९॥
पूर्वोक्त पहिछाण रे, देव सहायज बान्छवे।
सम्यक् दृष्टि जाण रे सावद्य लौकिक क्रत करे ॥९०॥
समकित ताम न जाय रे, नहीं जाय श्रावक पणो।
जो सुर पूजे नांहि रे, तो गुण अधिको अछे ॥९१॥
नारद कीरा पाय रे, द्रुपद सुता प्रणम्या नथी।
ए गुण छे अधिकाय रे, पिण पांडु प्रणमत करी ॥९२॥
जाव शब्द रे मांहि रे, कह्यो पिण नारद भणी।
प्रणमत कीधी ताहि रे, पिण तसु समकित नवि गई ॥९३॥

प्रत्यक्ष थी पहिचाण रे, समदृष्टि श्रावक तिके ।
शीश नमावे जाण रे, म्लेच्छ ना राजा प्रते ॥६४॥
तिमहिज डरता ताय रे, अथवा स्वार्थ कारणे ।
प्रणमे सुर ना पाय रे, ते मार्ग लौकीक छे ॥६५॥
ते मांटे पहिचाण रे पाखण्डी थी नवि चले ।
दृढ़ भासता जाण रे, मूल पंथ असहेज्झ नूं ॥६६॥
वलि जे कहे इम वाणि रे, सुर सहाय नहीं वच्छणो ।
तो चौवीस जिनना जाण रे, चौवीस यक्ष यक्षणी कहे ॥
शासन देव सहाय रे, तसु थुई पडिकमणे पढ़े ।
वलि शेत्रुंजे ताय रे, पूजे कीम चक्केश्वरी ॥६८॥
तथा यती थकां प्रत्यक्ष रे काला गोरा भैरव ।
माणभद्र दिक यक्ष रे, आराधे रक्षा भणी ॥६६॥
ए लेखे तो जोय रे सहाय देवनो वच्छवे ।
निज श्रद्धा अवलोय रे, तुम गुरु पिण नहीं समकिती ॥
पूजे भैरव आदि रे, श्रावक परणीजे तदा ।
शीतलादिक अहलाद रे, तुम लेखे नहीं श्रावक पणो ॥
तिणसूं देव सहाय रे लौकिक खाते वच्छतां ।
सम्यक्त तास न जाय रे, नहीं जावे श्रावक पणो ।१०२।

॥ इति असहेज्झाधिकार ॥

॥ अथ १२ मूं यात्रा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

यात्रा शेत्रुंजादि नीं, करवो-सीइक ख्यात ।
पिण ए यात्रा सूत्र में, कही नथी जगनाथ ॥ १ ॥
शतक अठारमें भगवती, दशमें उद्देसे सार ।
सोमल पूछ्या वीर प्रते, प्रश्न यात्रादि प्रकार ॥ २ ॥
हे भगवन्त ! स्यूं थांहिरै, यात्रा अधिक-उदार ।
इम सोमल पूछ्यां थके, उत्तर दे जगतार ॥ ३ ॥
जिन भाषे सुण सोमिला, छै मांहरै सुखकार ।
तप अणशणादिक नियम, ते अभिग्रह सार ॥ ४ ॥
संयम वलि सज्झाय ते, धर्म कथादिक जाण ।
ध्यान आवश्यक आदि वर, जोग विमल पहिचाण ॥ ५ ॥
ए पूर्वं कह्या तेहने विषे, जयणा प्रते राखे जेह ।
ते मांहरे यात्रा अछे, कह्या प्रवर वच एह ॥ ६ ॥
पिण शत्रुंजयादिक तणी, जिन यात्रा कही नांहि ।
देखोजी देखो तुम्हे, देखो हिवडा मांहि ॥ ७ ॥

॥ सोरठा ॥

वृत्ति विषे इम वाय रे, यद्यपि प्रभू केवल पणे ।
आवश्यकादि ताय रे, बोल केइक नहीं छे तसु ॥ ८ ॥

तथापि तप नियमादि रे, तसु फल ना सद्भाव थी ।
तप नियमादि संवादि रे, कहिये फल ते भासरो ।६।

॥ दोहा ॥

पुप्फिया उपाङ्ग में, तृतीय अध्ययन मझार ।
पार्श्व नाथ भगवन्त प्रते, सोमल विप्र जिंवार ॥१०॥
प्रश्न यात्रादिक पूछिया, तप नियमादि प्रवृति ।
पार्श्व प्रभू यात्रा कही, पिण गिरि नी न कथित ।११॥
ज्ञाताध्ययने पंचमें, मुनि स्थावरचा पूत ।
तेह प्रते शुक पूछिया, प्रश्न यात्रादि प्रभूत ॥१२॥
हे भदन्त ! यात्रा किसी, शुक पूछे ए सार ।
कह्यु थावरचा पुत्र इम, जे मुझ ज्ञान उदार ॥१३॥
दर्शन चारित्र तप वलि, संयम आदि विचार ।
योगे यती जीवनी, ए मुझ यात्रा धार ॥१४॥
इहां पिण यात्रा एह ही, ज्ञानादिक नी जोय ।
पिण शत्रुञ्जा आदि नी, यात्रा न कही कोय ॥१५॥
उत्तराध्ययन सु बारमें, हरिकेशी प्रति सार ।
विप्र पूछियो थांहिरे, कुंण द्रह तीर्थ उदार ॥१६॥
धर्म रूप मुनि द्रह कह्यो, ब्रह्मचर्य अवलोय ।
तीर्थ शान्तिकारी कह्यो, पिण गिरने न कह्यो कोय ।१७।

शेतुंजय पव्वए सिद्धे, सूत्रमें ऊम गिरि ख्यात ।
पिण शेतुञ्जे तीर्थ सिध, इम न कह्यो गणि नाथ ॥१८॥
जागां भलाइदी जाणि ने, कीधा तिहां संथार ।
वन्दनीक तो गुण अछे, जोवो हिये विचार ॥१९॥
जीव रहित तनु तेहनुं, ते पिण नहिं वन्दनीक ।
ती जागां वन्दनीक किम, न्याय विचारो ठीक ॥२०॥
नाज खला थी ले करी, घाल्यो जे कोठार ।
सूना खला लारे रह्या, चांटे तेह गिमार ॥२१॥
हुण्डी जे लाखां तणी, सिकारता जे स्थान ।
काल कीतले शेठजी, छोड़ी तेह दुकान ॥२२॥
हिव हुण्डी सिकरे नहीं, तेह दुकाने जोय ।
तिम शेत्रुञ्जादिक विषे, जिन मुनि सिद्धा सोय ॥२३॥
हिव ते पर्वत ने विषे, हुण्डी तणूं ज सोय ।
सिकारण वालो नहीं रह्यो, वन्दनीक किम होय ॥२४॥
वन्दनीक जो गिर हुवे, तो तिण ऊपर ताय ।
पग दीधां आशातना, हुवे तुझ श्रद्धा न्याय ॥२५॥
द्वीप अढाई ने विषे, दोय समुद्र विषेह ।
सहु ठामे सिद्धा मुनी, पन्नवणा सोलम एह ॥२६॥
जिहां एक सिद्धा तिहां, सिद्धा मुनि अनन्त ।
सूत्र उववाई मे विषे, भाख्यो श्री भगवन्त ॥२७॥

इम लेखे तुम वन्दवा, अढीद्वीप अवधार ।
फुन बे द्विप प्रति वन्दवा, त्यां सिद्धा अणगार ॥२८॥
ते माटे वन्दनीक छै, जिन मुनि महा गुणधार ।
पिण स्थानक वन्दनीक नहीं, वारु न्याय विचार ॥२९॥

॥ इति यात्रा अधिकार ॥

॥ अथ १३ मूं इक्कीस हजार वर्ष तीर्थ रहसी ते अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

सूत्र भगवती में कह्यो, बीसम् शतक विशेष ।
अष्टमुद्देशक वीर प्रति, गोयम प्रश्न करेह ॥ १ ॥
जम्बुद्वीप ना भरत में, ए अवसर्पिणी मांहि ।
काल कितलुं आपरो, तीर्थ रहिस्ये ताहि ॥ २ ॥
जिन कहे जम्बू भरत में, एह अवसर्पिणी मन्त ।
वर्ष सहस्र इकवीस मुझ, तीर्थ रहिस्ये तन्त ॥ ३ ॥
तीर्थ कहिजे केहने, इम को प्रश्न करेह ।
तसु उत्तर तीर्थ तीको, आगम सूत्र कहेह ॥ ४ ॥
वर्ष सहस्र इकवीस लग, रहिस्ये सूत्र उदार ।
बहु ठामे जे तीर्थ नुं, सूत्र अर्थ सुविचार ॥५॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थ आगम धार रे, अमर कोष में भाखियो ।
तीजा कारड मझार रे, थांतत वर्गे जाणवो ॥ ६ ॥
निपान आगम जेह रे, ऋषि सेव्यो जल गुरु विषे ।
ए चिहुं अर्थ विषेह रे, तीर्थ शब्द कह्यो तिहां ॥ ७ ॥

॥ श्लोक ॥

निपानाऽऽगमयो तीर्थ मृषि जुष्ट जले गुरौ ॥
इत्यमर तृतीय कांण्डे थांतत वर्गे ॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थ शास्त्र अवधार रे, हेम अनेकार्थे अख्यूं ।
द्वादश नाम मझार रे, प्रथम नाम ए भाखियो ॥ ८ ॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थं शास्त्रे १ गुरौ २ यज्ञे ३ पुण्य चेत्रा ४ वतार यो ५ ऋषि जुष्टे ६ जले मंत्रिण्यु ७ पाये ८ स्त्री रजस्यपि ९ योनौ १० पात्रे ११ दर्शनेषु १२ ॥

॥ इति हेम अनेकार्थे ॥

॥ सोरठा ॥

विश्व कोष रै मांहि रे, तीर्थ नाम कह्यु शास्त्र नूं ।
नव नामा में ताहि रे, प्रथम नाम ए पेखियो ॥ ९ ॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थं शास्त्रा १ ध्वर २ क्षेत्रो ३ पायो ४ पाध्याय ५ मंत्रिषु ६ अवता ऋषि ७ जुष्टांभ: ८ स्त्री रज: ९ सु च वि श्रुतं ।

॥ इति विश्वे थांतत वर्गं ॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थं शास्त्र इम लिख रे, कह्यो मेदनी कोष में।
दश नामा में देख रे, प्रथम नाम ए परवरो ॥१०॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थं शास्त्र १ ध्वर २ क्षेत्रो ३ पाय ४ नारीरज: ५ सु च । अवता ऋषि ६ जुष्टांबू ७ पात्रो ८ पाध्याय ९ मंत्रिषु १० ।

॥ इति मेदनी थांतत वर्गं ॥

॥ सोरठा ॥

गुणतीसम उत्तराध्ययन रे, बोल गुनीसम वृत्ति में।
तीर्थं शब्दे वयण रे, गणधर वा प्रवचन श्रुत: ॥११॥
भगवई वृत्ति मझार रे, तित्थ गराणं नो अर्थं ।
तीर्थं प्रवचन सार रे, इमहिज समवायङ्ग वृत्ती ॥१२॥

तीर्थ प्रवचन सार रे, तेहना पव्यतिरेक थी।
संघ तीर्थ सुविचार रे, तसु कर्ता तीर्थङ्करा ॥१२॥

॥ अत्र टीका ॥

तरंति तेन संसार सागरमिति तीर्थ प्रवचनं तद्ऽव्यतिरेकाद्येह संघ तीर्थं तत करण शीलत्वा तीर्थंकरः।

॥ एहनु अर्थ वार्तिका करिइं कहै छै ॥

तिरै तिणकरी संसार सागर इति तीर्थ ते तीर्थ ने करिवा नो शील पणा थकी तीर्थंकर कहिये, इम भगवती नी वृत्ति में नमोत्थूण में तित्थगरा नो अर्थ कियो, इमहिज समवायंग नी वृत्ति ने विषे जाणवो इहां तीर्थ नाम प्रवचन सूत्र नुं कह्युं, ते पाठ अर्थ रूप सूत्र साधू साध्वी आधार रह्या छे अने अर्थ रूप सूत्र श्रावक श्राविका ने आधारे रह्यो छे, ते सूत्र तीर्थ तो आधेय छे अने चतुर्विध संघ आधार छै ते अधेय ने आधार ना किण ही प्रकारे करी अभेदोपचार थकी संघ ने तीर्थ कह्युं तेहने करिवा नूं शील ते माटे तीर्थंकर कहिये।

इहां मुख्य अर्थ प्रवचन ने तीर्थ कह्युं ते प्रवचन रूप तीर्थ बहुल पणे संघ ने विषे रह्युं छे तिण सूं संघ ने तीर्थ कह्युं ते प्रवचन रूपी तीर्थ थी संघ जुदो नथी ते माटे।

॥ सोरठा ॥

तीर्थ प्रवचन सार रे, तत् करण शील तर्थङ्करा।
नमोत्थूणं में धार रे, राय प्रश्नेणी वृत्ति मे ॥१३॥

॥ अत्र टीका ॥

तीर्थं ते संसार समुद्रोऽनेनेति तीर्थं प्रवचनं तत् करण शीलास्तीर्थ कराः तेभ्यः ॥ इति ॥

॥ एहनुं अर्थ वार्तिका कराइं कहे छे ॥

तीरीये संसार समुद्र इणे करी इति तीर्थ प्रवचन सूत्र ते तीर्थं करिवा ना शील थकी तीर्थंकर कहिये, इहां राय प्रश्नेणी नी वृत्ति में प्रवचन ते आगम ने तीर्थ कह्युं ते आगम रूपी तीर्थ ना कर्त्ता तीर्थंकर छे ते माटे तीत्थयरे नो अर्थ तीर्थंकर कियो ।

॥ सोरठा ॥

पन्नवणा वृत्ति मझार रे, पनर भेद में तित्थ सिद्धा ।
प्रथम पदे अवधार रे, दाख्यो, छै ते सांभलो ॥१५॥
सत्य प्ररूपक सोय रे, परम गुरु छै तेहना ।
वचन विमल अवलोय रे, तीर्थं कहिये तेहने ॥१६॥
ते निराधार नहिं होय रे, तसु आधारज संघ प्रति ।
तीर्थं कहिये जोय रे, वा धुर गणधर तिहां कह्युं ॥१७॥

॥ अत्र टीका ॥

तीर्थं तें संसार सागरो अनेनेति तीर्थं यथा अवस्थित सकल जीवा-जीवादि पदार्थ परूपर्क परमगुरु प्रणीत वचनं तद्य निराधार न भवति इति तदा धारं संघ. प्रथम गणधरो वा तस्मिन् उत्पन्नाये सिद्धाहस्ते तीर्थ सिद्धा ।

॥ एहनुं अर्थ वार्तिका कराइं कहे छे ॥

तिरीयै संसार सागर इणे करी इति तीर्थं यथावस्थित सकल जीव अजीवादिक पदार्थ ना प्ररूपक परमगुरु ना कह्या वचन तेहने तीर्थ कहिये अने ते परम गुरु ना वचन रूप तीर्थ ते आधार विना न हुवे इम ते संघ ने आधार छे ते भणी संघ ने तीर्थ कहीजै, अथवा प्रथम गणधर ने तीर्थं कहिये ते संघरूप तीर्थ ने विषै ऊपना जे सिद्ध थया ते तीर्थं

सिद्धः इहां पिण परम गुरु ते तीर्थंकर तेहना वचन ते आगम तेहने तीर्थ कह्यो, ते आगम आधार विना न हुवै ते आधार माटे संघ ने तथा प्रथम गणधर ने तीर्थ कह्यो ।

॥ सोरठा ॥

आवश्यक निर्युक्ति रे, तास अर्थ में भाव थी ।
तीथ प्रवचन उक्त रे, समर्थ क्रोधादि जीपवा ॥१८॥

॥ अत्र टीका ॥

इह भाव तीर्थं क्रोधादि निग्रहं समर्थं प्रवचनं मेव गृहते ।

॥ एहनुं अर्थ ॥

इहां भाव तीर्थ क्रोधादि निग्रह समर्थ प्रवचन सूत्र हीज ग्रहण करिये, इहां पिण प्रवचन सूत्र ने तीर्थ कह्यो ।

॥ सोरठा ॥

इत्यादिक बहु ठाम रे, तीर्थ सूत्र भणी कह्युं ।
ते तीर्थ प्रवचन ताम रे, रहिस्ये इकवीस सहस्र वर्ष ।१९।
प्रवचन तीर्थ सोय रे, संघ आधारे हुवै कदा ।
कियाहिक बेलां जोय रे, द्रव्य लिङ्गी आधार हुवे ॥२०॥
जद को प्रश्न करन्त रे, मुनिना गुण बिन जेहनुं ।
भण्यूं सूत्र किम हुन्त रे, तसु उत्तर हिव सांभलो ॥२१॥
धुर उद्देश ववहार रे, बहुश्रुत बहु आगम भण्युं ।
द्रव्य लिङ्गी जे धार रे, मुनि प्रायश्चित ले तिण कने ॥२२॥

इहां द्रव्य लिङ्गी आधार रे, सूत्रागम श्री जिन कह्या।
तसु श्रद्धा आचार रे, विरुद्ध हुवे ते तो जुदो ॥२३॥

॥ वार्तिका ॥

ववहार उद्देशे पहले कह्यो साधू ना रूप सहित भेषधारी बहुश्रुत बहु आगम नूं जाण ते कने साधू आलोवणा करे एहवुं कह्युं ए भेषधारीने आधार बहु श्रुत बहु आगम कह्यो छे ते माटे तेहनुं जेतलुं जेतलुं शास्त्र ना अर्थ नूं शुद्ध जाणपणो ते श्रुत आगम रूप तीर्थ नूं अंश संभवे ते माटे किणहिक काले चतुर्विध संघ न हुवे तो स्थिलाचारी ने आधारे प्रवचन रूप तीर्थ नो अंश हुवे एहवुं संभाविये छे।

॥ सोरठा ॥

वलि ववहार कथित रे, बहु श्रुत आगम भण्युं।
श्रावक पश्चात्कृत्य रे, मुनि आलोवे तिण कने ॥२४॥
इहां ग्रहस्थ आधार रे, बहु श्रुत आगम जिन कह्यो।
तसु सावद्य व्यापार रे, ए तो एह थी छे जुदो ॥२५॥
अर्थ रूप अवलोय रे, जाण पणूं छे जेह नूं।
ते निर्वद्य छे सोय रे, सूत्र तीर्थ छे जे भणी ॥२६॥
मिथ्यादृष्टि देख रे, देश ऊंण दश पूर्व धर।
उत्कृष्ट सम्पेख रे, नन्दी मांहि निहालज्यो ॥२७॥
मिथ्याती आधार रे, इहां प्रभु पूर्व आखिया।
श्रद्धा तास असार रे, ते तो धुर आस्रव अछे ॥२८॥
इमहिज पञ्चम् आर रे, किण बेल्यां मुनि नहिं थया।
द्रव्य लिंग्याद्या धार रे, सूत्र रूप तीर्थ हुइं ॥२९॥

सघ आधारे जेह रे सूत्र रूप जे तीर्थ ते।
निरन्तर नहीं दीसेह रे, वर्ष सहस्र इकवीस लग ॥३०॥
कदही संघ आधार रे, कदही अन्य आधार हुवे।
सूत्र तीर्थ सुखकार रे, वर्ष इकवीस हजार लग ॥३१॥
कोई कहै चिहुं विध सङ्घ रे, तेह भणी तीर्थ कह्युं।
तसु आधार सु चङ्ग रे, प्रवचन तीर्थ ते भणी। ३२॥
मिण प्रवचन सु प्रशंस रे, द्रव्य लिङ्गी आधार तसु।
तीर्थ तणोज अंश रे, किम कहिये ? उत्तर तसु ॥३३॥
पण्डित मर्ण विख्यात रे, शत दूजे उद्देश धुर।
पाउवगमन सुजात रे भत्त पच्चखाण ज दूसरो ॥३४॥
मुख वचने करि न्हाल रे, मरण पण्डित बे आखिया।
मुनि अणशण बिन काल रे, करै तिको पण्डित मृत्यु ३५
बाल मर्ण पुन बार रे, मुख्य वचन करि ने कह्या।
बार मरण तिण धार रे, असंयती नो बाल मृत्यु ॥३६॥
पूरण तापस ताहि रे, वलि जमाली तामली।
बार मरण में नाहिं रे पिण बाल मरण ते जाणवो।३७।
मुख बचन करि बार रे, बाल मरण आख्या प्रभू।
तिम तीर्थ संघ च्यार रे, मुख बचन करि जाणवा।३८
पण्डित मरण पिण दोय रे मुख बचने करिने कह्या।
तिम चिहुं तीर्थ जोय रे, मुख्य बचन करि जाणवा।३९।

॥ एहिज अर्थ वार्तिका करिइं कहै छे ॥

जिम भगवती शतक दूसरे उद्देशे पहले मुख्य बचने करी बाल मरण बारा प्रकार नो कह्यो अने असंयती अविरती बारा प्रकार विना वालतो ही मर जाय ते पिण बाल मरण हिज छे, तथा तामली जमाली प्रमुख नो बाल मरण हीज छे पिण ते बारामें नथी कह्यो ते माटे ये बार प्रकार बाल मरण मुख्य बचने करी जाणवो, वा य ले पण्डित मरण ये प्रकार कह्या एक तो प द्रोपगमन दूजो भत्तपच्चखाण ए पिण मुख बचने करी कह्या, जे साधू संथारा बिना आराधक पद पायो तेह पिण पण्डित मरण हिज छे जिम श्रवानुभूति तथा सुनक्षत्र मुनि नो संथारो वाल्यो नथी ते भणी भत्त प्रत्याख्यान पादोपगमन तो नथी पिण पण्डित मरण हिज छे अने पादोपगमन भत्तपच्चखाण ए बे भेदे पण्डित मरण कह्या ते मुख्य बचने करी जाणवा, तथा आराधना ज्ञान दर्शन चारित्र ए तीन प्रकार नी भगवती शतक आठमें उद्देशे दशमें कही ते पिण मुख बचने करी जाणवी, अने वलि तिणहिज उद्देशे श्रुत ते समकित रहित अने शील किया सहित ने देश आराधक कह्यो तिहां वृत्तिकार कह्यो ए बाल तपस्वी थोडो अंश मुक्ति मार्ग नो आराधे एहवो अर्थ कियो छै जिम ज्ञान रहित शील सहित बाल तपस्वी मोक्ष मार्ग नो अंश आराधे ते देश अराधक छै पिण तीन आराघना में नथी तिम द्रव्य लिङ्गी ने आचार प्रवचन सूत्र ते तीर्थ नो अंश संभवे पिण ते च्यार तीर्थ में नथी।

॥ सोरठा ॥

वर्ष इकीस हजार रे, तीर्थ रहिस्ये न्याय तसु।
एम संभवे सार रे, पुन बहुश्रुत कहै तेह सत्य ॥४०॥
वर्ष इकवीस हजार रे, तीर्थ रहिस्ये इम कह्यो।
पिण चिहुं तीर्थ सार रे, रहिस्ये इम भाख्यो नथी ॥४१॥

ते माटै अवधार रे, तीर्थ प्रवचन सूत्र छै।
कहहि संघ आधार रे द्रव्य लिङ्गी आधार नहि ।४२।

॥ दोहा ॥

सूत्र भगवती नी पवर मम कृत जोड विषेह।
वलि कर्म्म तीर्थ न्याय कह्यु, ते इहां ग्रहण करेह ।४३।

॥ इति इकीस हजार वर्ष तीर्थ रहसी ते अधिकार ॥

॥ अथ चौदमूं आगम अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

पंच अने चालीस में, जे चिहु शरण विचार१ ।
नाम भक्त परिज्ञा २ वलि, फुन पईन्नो सन्थार३ ॥ १ ॥
जीत कल्प ४ पिंड नियुक्ति५ पच्चखाण कल्प अवलोय ।
ए षट नी नन्दी विषे, साख नहीं छै कोय ॥ २ ॥
महा निशीथ विषे कह्यु, द्वितीय अध्ययन मझार।
कु लिखत दोष देवो नहीं, तसु कारण अवधार ॥ ३ ॥
एहिज महा निशीथ में, किहांएक अर्द्ध शीलोग।
किहां श्लोक किहां अक्षर नी, पंक्ति ओली प्रयोग ॥ ४॥
किहांएक पानो अर्द्ध हो, किहां पत्र वे तीन ।
गल्यो ग्रन्थ इम आदि बहु, इह विध कह्यु सुचीन । ५ ।
वलि कह्यु तृतीय अध्ययन में, ए पुस्तक रे मांहि।
चेंट्ठो इक पाना थकी, बीजो पानो ताहि ॥ ६ ॥

ते माटे ए सूत्र नुः आलावा न प्रामेह ।
तिहां भगवत्हार सूत्रां तणा, त्यां अशुद्ध लिख्यु हुवे जेह ॥
दोष न देवा तेहनो, खंड खंड थई एह ।
पत्र मह्या खाधा वलि, जीव उदेहि जेह ॥ ८ ॥
हरिभद्र निज मति करी सांधी लिख्यू ज ताम ।
इम कह्यु महानिशीथ मे वलि अन्य आचार्य नाम ॥९॥
तिण सूं महानिशीथ पिण, डोहलाणो छै एह ।
सर्व सूत्रगो नहि रह्यो, निपुण विचारो तेह ॥१०॥
शेष रह्या अट तेह में, काइक काइक थाय ।
अङ्ग सूं न मिले तेह वच, किम मानीजे ताय ॥११॥
टीका चूरणि दीपिका, भाष्य निर्युक्ति जाण ।
किणही करी दोसे नथी, तिण सूं एह अप्रमाण ॥१२॥
एकादश जे अङ्ग थी, मिलता वचन सुजाण ।
सर्व मानवा योग्य सुभ. पइन्ना प्रमुख पिछाण ॥१३॥
धुर वे अङ्ग नी वृत्ति जे शीलाचार्यें किद्ध ।
अभयदेव सूरे करी, नव अङ्ग वृत्ति प्रसिद्ध ॥१४॥
फुन अभय देव सूरे रची, प्रथम उपांग प्रबन्ध ।
चन्द्र सूरि विरचित वृत्ति, निरावलिया श्रुतस्कन्ध ॥१५॥
शेष उपांग अरु छेदनी, मलयागिरि कृत जोय ।
हेमाचार्य्ये वृत्ति करी, अनुयोग द्वार नी सोय ॥१६॥४

हरिभद्र सूरे करी, दशवैकालिक वृत्ति ।
भाष्य अने वलि चूर्णि पिण, पूर्वाचार्य कृत ॥१७॥
तिम ए वट नी नवि करी, पूर्वाचार्ये जोय ।
तिण सूं तिणे न मानिया, एहवूं दीसे सोय ॥१८॥
शेष रह्या बत्तीस जी, मानण योग आरोग्य ।
एह थी मिलता अन्य पिण, छै मुझ मानण योग ।१९।

॥ इति आगम अधिकार ॥

॥अथ पनरम मुख वस्त्रिका अधिकार॥

॥ दोहा ॥

इन्द्रभूति ने भाखियो, मृगा राणी ताहि ।
मुंहपोत्तिया इं करी, मुख बांधो मुनिराय ॥ १ ॥
ते मुख कहिये केहने, उत्तर तसु अवलोय ।
नाक तणो ए नाम मुख, न्याय विचारी जोय ॥ २ ॥
दुर्गन्ध आवे नाक ने, ते माटे सुविचार ।
नाक बांधवा नी कही, राणी मृगा जिवार ॥ ३ ॥
ज्ञाता अध्ययन आठमें, दुर्गन्ध व्याप्यां ताय ।
षट राजा मुख ढांकिया, ते दुर्गन्ध नाशी आय ॥ ४ ॥
ज्ञाता नवम अध्ययन में, दुर्गन्ध व्याप्यां न्हाल ।
मुख ढांक्या आख्या तिहां, जिन ऋषि ने जिन पाल ।५।

ज्ञाता अध्ययन बारमे, जे जितशत्रु राय ।
मुख ढांके कुम आखिया, दुर्गन्ध व्यापे ताय ॥ ६ ॥
मुखनो अवयव नाक छै, ते नाक भणी मुख ख्यात ।
वारू न्याय विचार ने, समझो सुगुण सुजात ॥ ७ ॥
होट हडवटी नाक फुन, अरू गाल निलार ।
मुख ना अवयव ते भणी, मुख कहिये सुविचार ॥८॥
धुर अङ्ग प्रथम अध्ययन में, द्वितीय उद्देश उदंत ।
पृथिवी वेदन ऊपरे, अन्ध पुरुष दृष्टन्त ॥ ९ ॥
पग सूं लेई शिर लगे, तनु हाणि शत स्थान ।
भाला सूं भेदे वलि, खडगी छेदे जान ॥१०॥
तिहां होट हडवटी नाक फुन, आंख जीभ ने दन्त ।
गाल निलार अरु कर्ण फुन, जू जुआ नाम कथन्त॥११॥
ए मुखना अवयव कह्या, पिण मुख नो न कह्यो नाम ।
ते माटे ए सहु भणी, मुख कहिये छै ताम ॥१२॥
द्वादश आंगुल मुख कह्यो, नव मुख नो सहु देह ।
अनुयोग द्वारे आखियो, देखो पाठ विषेह ॥१३॥
ललाट थी लेई करी, द्वादश आंगुल जाण ।
नाक होट ने हडवटी, ए मुख तणुं प्रमाण ॥१४॥
गर्गाचार्य ना कुशिष्य, मुख ने विषे विकार ।
भृकुटी करे कह्या प्रभू, उत्तराध्ययन मझार ॥१५॥

मुख नो दृग निलाड छे, ते निलाड ने मुख ख्यात।
भृकुटी ललाट ने विषे, प्रत्यक्ष ही देखात॥१६॥
ठाम ठाम सूत्रे कह्युं, त्रिवलि भृकुटी ललाट।
निरावलियादिक ने विषे, प्रभुजी भाख्या पाठ॥१७॥
तिमज मृगा राणी तदा, नाक भणी मुख ख्यात।
ते दुर्गन्ध प्रति टालवा, पेखो तन पखपात॥१८॥
कर राखे मुख वस्त्रिका, जसु तीखो उपयोग।
तो पिण नांहिं अटकाव तसु, नहिं मुझ खंच प्रयोग।१९।
तीखो नहिं उपयोग तसु, जतना काज सुजोय।
मुख बांधे मुख वस्त्रिका, तो पिण दोष न होय॥२०॥
मुख बांधे डोरे करी, कोई कहे किहां ख्यात।
सांचूं जो सांचूं कह्युं सांचूं प्रश्न सुजात॥२१॥
नहिं तीखो उपयोग तसु, मुख बांधे सुविचार।
वायु नो जतना भणी, पिण नहिं छे शृङ्गार॥२२॥
सूंठ तणो जे गांठियो, गणी देवर्द्धि सवाद।
भोलावणो भूलो गया, सन्ध्या आयो याद॥२३॥
जाण्यो बुद्धि छीणी पडी, लिख्या सूत्र सुख रास।
वीर निर्वाण गयां पछे, नवसय असी वास॥२४॥
तिम तीखो उपयोग अति, रहतो जाणे नांहि।
डोरा सूं मुख वस्त्रिका बांधे छे मुनिराय॥२५॥

अशणादिक प्रति वहिरतां, पांतौ करतां सोय।
अन्य साधु प्रति वामतां, चरचा करतां जोय ॥२६॥
मुनि मे कारये भलावतां. इत्यादिक सु प्रयोग।
मुख वांध्यां विन किम रहे, अति तीखो उपयोग ॥ २७॥
तिण सूं यतना कारणे, डोरो घालो साथ।
मुख बांधे मुख वस्त्रिका, और कारण नहिं कोय ॥२८॥
यदि कहे डोरो किहां कह्यो ? तसु कहिये इम वाय।
कान विषे घाले तिका, किसा सूत्र रे मांहि ? ॥२९॥
मुख बांधे डोरे करी, तसु करे निन्दा तात।
कान वधावे प्रगट ए, आ किसा सूत्र नी वात ॥३०॥
तर्क करे डोरा तणो, कहे किण सूत्रे ख्यात।
कान वधावे तेहनो, क्यूं नहिं पूछे वात ॥३१॥
मोर पृच्छना देश प्रति घालो कर्ण मझार।
उदक थकी छांटा थका फूले तेह तिवार ॥३२॥
इम नित प्रति वहु उपकारी; कर्ण वधाय विशेष।
इम घाले मुख वस्त्रिका, किसा सूत्र मे लेख ? ॥३३॥
कहे वचन शुद्ध यतना अर्थ, घालां कर्ण मझार।
तो डोरो पिण यतना अर्थ, न्याय सरीषो धार ॥३४॥
उदक तणा घट ने विषे, डोरो वांधे तेह।
किसा सूत्र में ते कह्यु; देखोजी चित्त देह ॥३५॥

तथा तर्पणी प्रमुख जे, डोरौ बांधै तास ।
ते किण सूत्र भाखियो ? जोवो हिये विमास ॥३६॥
कम्बर बिछाणा नी करै, तसु डोरौ बांधेय ।
ते पिण किण सूत्र कह्युं ? न्याय विचारी लेह ॥३७॥
वलि सिराणा बांधता, डोरौ थकीज जोय ।
ते पिण किण सूत्रे कह्युं, उत्तर आपो मोय ॥३८॥
वलि चिरमली सूत्र में, भाखी श्री भगवान ।
तसु डोरौ बांधै तिका, किसा सूत्र में आन ? ॥३९॥
पुस्तक ने पूठा तणे, पडला रै पहिचाण ।
डोरी बांधे छै तिका, किसा सूत्र में वाण ? ॥४०॥
वलि लिखणा राखणा, कलमदान कहिवाय ।
डोरी बांधे तेह ने, किसा सूत्र रे मांय ? ॥४१॥
लिखवारी पाटी तणे, डोरौ प्रति बांधेह ।
किसा सूत्र में ते कह्युं, देखो तसु लेखेह ॥४२॥
तथा लोक माना तणे, डोरी थी पाडेह ।
फांच्या नी पाटी करे, किसा सूत्र में तेह ? ॥४३॥
कारण में पग प्रमुख रै, पाटो बांधै देख।
डोरी बांधे तेह ने, किसा सूत्र में लेख ? ॥४४॥
गोछारे डोरा थकी, पाता बांधे तेह ।
किसा सूत्र मांही कह्यो ? उत्तर आपो एह ॥४५॥

डोरा सूं मुंह मोतिया, बांधे जयणा काज।
तर्क करे तसु पूछिये, इतला बोल समाज ॥४६॥
कहे अष्ट पहर बांध्यां रहे, ते किण सूत्रे ख्यात ?
तो एक पहर बांधे तिका, किण सूत्रे अवदात ॥४७॥
वखाण मे इक पहर लग, कर्ण घाल बांधन्त ।
ते पिण किणी सिद्धान्त मे, भाष्यो नहिं भगवन्त ।४८।
अष्ट पहोर बांध्यां थकां, दोष घणो जो होय।
तो एक पहोर बांध्यां थकां, दूषण थोड़ो जोय ॥४९॥
जो एक पहोर बांध्यां थकां, दोष नहिं छे कोय।
तो आठ पहर बांधे तसु, दोषण किण विध होय ।५०।
डोरो घाले कर्ण में, तेहनो दोषण होय।
तो कर्ण विषे मुख वस्त्रिका, घाल्यां दोषण जोय ।५१।
जो कर्ण विषे मुख वस्त्रिका, घाल्यां दोष न कोय।
तो डोरो घाले कर्ण मे, तो पिण दोष न होय ॥५२॥
कोई कहे मुख वस्त्रिका, अष्ट पहर लग एह।
बांध्यां कफ में ऊपजे, जीव समछिम जेह ॥५३॥
तो मुनि मज्झा तनु विषे, थयो गुम्बडो कोय।
राधि रुधिर रै ऊपरै, पाटो बांधे सोय ॥५४॥
जीव समुर्च्छिम ते विषे, उपजे तिण रै लेख।
पाटा रै लागा रहे, रुधिर राधि सम्पेख ॥५५॥

जब कहे तनु नो गर्भ थी, जीव न उपजे आय।
तो कफ में किम ऊपजे, एक सरीषो न्याय ॥५६॥
पाटे जीव न उपजे, तो कफनी क्यूं ताय।
समझो जो समझो तुम्हे, समझो चतुर सुजाण ॥५७॥
तनु असज्झाई मुनि तणी, इक विध ब्रण सम्बेद।
रजुख्वला ने ब्रण फुन, अज्झा ने बे भेद ॥५८॥
ए तनु असज्झाई विषे, मुनि अज्झा ने ताय।
निज निज स्थानक ने विषे, करवी नहिं सज्झाय।५६।
ए तनु असज्झाई विषे, मुनि अज्झा ने ताहि।
देवी लेवी बांचणी, कल्पे मांहो मांहि ॥६०॥
ववहार उद्देशे सातमें, इम भाषी प्रभु वाण।
राखो जिन वच आस्था, समझो मती सुजाण ॥६१॥
तनु सलग्न वस्त्र ने विषे, जो जन्तु उपजेह।
तो मांहों मांहीं बांचणी, तसु आज्ञा किम देह। ६२॥
जो उघाड़े मुख बोलियां, न मरे वायु काय।
तो बखाण में मुंह वस्त्रिका, ते बांधे किण न्याय।६३।
फूंक देणी वरजी प्रभू, वायु ने अधिकार।
दशवैकालिक देखलो, तूर्य अध्ययन मझार।६४।
मुख ने वायु करि मरे, वायु जीव विचार।
दश में अंगे देखलो, पहिले आस्रव द्वार ॥६५॥

सूत्र भगवती ने विषे, सोलम शतक मझार।
द्वितीय उद्देशे भाखियो, कहिये ते अधिकार ॥६६॥
शक्र उघाड़े मुख लवे, भाषा सावद्य सोय।
हस्त वस्त्र मुख दे वदे, निरवद्य भाषा होय ॥६७॥
वृत्तिकार इम भाखिया, जीव संरक्षण सोय।
निरवद्य भाषा जाणवी, अन्या सावद्य होय ॥६७॥
विकलेन्द्री ना पज्झत्तग्गा, तेहना स्थानक जेह।
ते सुरलोक विषे नथी, पन्नवणा द्वितीय पदेह ॥६८॥
धर्म सम्बन्धी वार्त्ता, करै शक्र जेहवार।
बोले मुख ढांकी तदा, ते निरवद्य वच सार ॥७०॥
संसारिक जे वार्त्ता करै, शक्र जेहवार।
वदे उघाड़े मुख तदा, ते सावद्य वच धार ॥७१॥
तिण कारण वायु तणो, दया अर्थ मुनिराज।
मुख बांधे मुंहपोत्तिया, पिण अवर नहिं के काज ॥७२॥

॥ अथ सोलहमूं स्याद्वाद अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई। कहै भगवन्त नो, स्याद्वाद मत जोय।
एकान्तिक कहिवूं नहीं तसु उत्तर अवलोय ॥ १ ॥
स्याद:कथंचित जाणवूं, किण ही प्रकार करेह।
वदवूं, कहिवूं, वादते, स्याद्वाद के एह ॥ २ ॥

कहिये किणी प्रकार करी, ते स्याद्वाद कहिवाय।
न्याय कहूं छूं तेहनो, सांभलजो चितल्याय ॥ ३ ॥
सूत्र भगवती ने विषे, शतक सातमें सोय।
द्वितीय उद्देशे भाखियो, जीव प्रश्न अवलोय ॥ ४ ॥
किणी प्रकार करि प्रभू, जीव साश्वता ख्यात।
किण ही प्रकार असाश्वता, आख्या श्री जगनाथ ॥ ५ ॥
द्रव्य थकी तो साश्वता, भाव थकी सुविचार।
असाश्वता प्रभूजी कह्या, ए स्याद्वाद मत सार ॥ ६ ॥
सूत्र भगवती ने विषे, शतक चौदमें सार।
तूर्य उद्देशे भाखियो, परमाणु अधिकार ॥ ७ ॥
कह्यो परमाणू साश्वतो, किणी प्रकार करेह।
किणी प्रकार असाश्वतो, हिव तसु न्याय कहेह ॥ ८ ॥
द्रव्य थकी तो साश्वतो, परिमाणू प्रति ख्यात।
न मिटे परम अणू पणो, किण ही काल विख्यात ॥९॥
वर्णादिक ने पज्जव करि, असाश्वता अवलोय।
स्याद्वाद वच एह छै, न्याय दृष्टि करि जोय ॥१०॥
वृहत्कल्प मांहि कह्युं, पञ्चमुद्देश मझार।
प्रथम पोहर असणादि प्रति, वहिरी ने अणगार ॥११
तूर्य पहर राखी करी, ते असणादि प्रतेह।
भोगवणो कल्पे नहीं, सुखे समाधे एह ॥१२॥

गाढा गाढ आतङ्क करि, तूर्य पहर में तेह ।
भोगवणो कल्पे तसु, स्याद्वाद वच एह ॥१३॥
प्रथम पहर वहिरो करी, कारण पडियां ताहि ।
रात्रि विषे जे भोगवे, ए स्याद्वाद वच नांहि ॥१४॥
तूर्य पहर आज्ञा कही, निश नी आज्ञा नांहि ।
तिण सुं निश नहिं भोगवे, कारण पडियां ताहि ।१५।
द्वितीय उद्देशे ने विषे, वृहत्कल्प रे मांहि ।
जल वा मद ना घट तिहां, रहिवूं कल्पे नांहि ॥१६॥
अन्य स्थान न मिले कदा, तो इक वे निशि जाण ।
रहिवूं कल्पे प्रभू कह्यो, ए स्याद्वाद पहिचाण ॥१७॥
तिणहिज उद्देशे आखियो, जे आखी निशि मांहि ।
दीपक वा अग्नि बले, तिहां नहिं रहिवूं ताहि ॥१८॥
जो अन्य जागां नहिं मिले, तो इक वे निशि तिण स्थान
रहिवूं कल्पे प्रभू कह्यो, ए स्याद्वाद वच जान ॥१९॥
मुनि ने सङ्घट्टो स्त्री तणो, करिवो वरज्युं स्वाम ।
सोलमां उत्तराध्ययन में, वलि बहु सूत्रे ताम ॥२०॥
वृहत्कल्प छट्ठे कह्युं, नदी प्रमुख थी बार ।
अज्र्जा प्रति काढे मुनी, ए स्याद्वाद मत सार ॥२१॥
गृहस्थ पुरुष वा स्त्री भणी, नदी प्रमुख थी जोय ।
काढे मुनि वच एहवूं, स्याद्वाद नहिं कोय ॥२२॥

दशवैकालिक देखल्या, तूर्य अध्ययन मझार।
सचित उदक नहिं सङ्कटे, ए जिन आज्ञा सार ॥२३॥
बृहत्कल्प तीजे कह्युं, विस्तर कारण थी जोय।
नदी उतरणी प्रभू कही, ए स्याद्वाद बच होय ॥२४॥
मरणान्त कष्टे मुनि भणी, सचितोदक अवलोय।
भोगवणूं प्रभू एहवूं, स्याद्वाद नहिं होय ॥२५॥
उत्तराध्ययन कथा विषे, परीषह द्वितीय प्रसिद्ध।
मर्णान्त कष्टे क्षुलक शिष्य, सचितोदक नहिं सिद्ध ।२६।
शत अष्टादश भगवती, दशम उद्देशे देख।
पूछ्यो सोमिल प्रभू प्रति, जे स्यु छो तुम्ह एक ॥२७॥
तथा तुम्हे स्यूं दोय छो, वा अक्षय तुम्ह होय।
फुन स्यू अव्यय छो तुम्हे, अवस्थित तुम्ह जोय ॥२८॥
के तुम्ह अनेक भूत फुन, भाव भविक अवधार।
वीर भणी षट प्रश्न ए, सोमल पूछ्या सार ॥२९॥
वृत्तिकार कह्यो तब प्रभू स्याद्वाद प्रति तय।
सर्व दोष गोचर रहित, अविलम्बी कही वाय ॥३०॥
इक पिण हूं छूं सोमिला, यावत बलो अनेक।
भूत भाव भावी अपि, हूं छूं इम कह्युं पेख ॥३१॥
किण अर्थे प्रभु इम कह्युं, जाव भविक हूं सोय।
प्रभू कहे द्रव्यार्थ करी, इक पिण छूं अवलोय ॥३२॥

ज्ञान दर्शन करि दोय छ, प्रदेशार्थ करि ताय ।
अक्षय छूं अव्यय अपि, अवस्थित पिण थाय ॥२३॥
अनेक भूत भावी अपि, छूं उपयोग करेह ।
न्याय सहित उत्तर कर्यूं, स्याद्वाद वच एह ॥२४॥
इमज थावरचा सुक प्रते, ज्ञाता पञ्चम् लेह ।
इमज पार्श्व सोमिल प्रते, पुष्फिया विषे कहेह ॥२५॥
सहु दोषण करि रहित छै, स्याद्वाद वच एह ।
पिण दोषण कर सहित वच, स्याद्वाद न कहेह ॥२६॥
पूर्वापर अविरुद्ध वच, स्याद्वाद मति मांहि ।
पिण पूर्वापर विरुद्ध वच, स्याद्वाद वच नांहि ॥२७॥
इत्यादिक प्रभू आखिया, किण ही प्रकार करेह ।
नित्य अनित्यादिक जिके, स्याद्वाद वच तेह ॥२८॥
पिण ज्यों किण ही प्रकार करि, कुशील में नहिं धर्म ।
वलि नहिं किण ही प्रकार करि, शील विषे अघ कर्म्म ।२९
अज हिन्सादिक में नहीं, किण ही प्रकारे धर्म ।
किण ही प्रकार बंधे नहीं, सम्वर थी अघ कर्म ॥४०॥
किण ही प्रकार हुवे नहीं, सावद्य मांही धर्म ।
किण ही प्रकार बंधे नहीं, निरवद्य थी अघ कर्म ।४१।
किण ही प्रकार हुवे नही, जिन आज्ञा विन धर्म ।
किण ही प्रकार नहीं बंधे, आज्ञा थी अघ कर्म ॥४२॥

॥ इति स्याद्वाद अधिकार ॥

॥ अथ १७ मूं विषंवाद अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै विषंवाद मत, प्रभू नो समय विषेह।
किण सूत्रे वच जे कह्यु, किहां अन्यथा तेह ॥ १ ॥
किण सूत्रे वच जे कह्यु, ते वच अन्य सूत्रेह।
विकटे ते विषवाद कहै, उत्तर तास सुणेह ॥ २ ॥
सखर सप्त भङ्गी कही, जिन वाणी सुखदाय।
सप्त नये करि सत्य वच, तसु विषंवाद न कहाय ॥ ३ ॥
किण ही सूत्र विषे प्रभू, आख्या वयण विख्यात।
विगटे जे अन्य सूत्र थी, ते विषंवाद वच थात ॥ ४ ॥
विषंवाद वच एह तो, प्रभू नो नहिं छे कोय।
वच केवल ज्ञानी तणो, व्यभचारिक नहीं कोय ॥ ५ ॥
विषंवाद जोगे करी, अशुभ नाम कर्म बंध।
अष्टम शतके भगवती, नवमें उद्देशे सन्ध ॥ ६ ॥
विषंवाद ए अशुभ छे, तिण थी अशुभज बंध।
तो किम हुवे प्रभूजी तणो, विषंवाद वच मन्द ॥ ७ ॥
अविषंवाद योगे करी, नाम कर्म शुभ बंध।
अष्टम शतके भगवती, नवम उद्देशे संध ॥८॥
दशमा अङ्ग में देखलो, सप्तमध्ययने मांहि।
सत्यवादी छे तेह नुं, विषंवाद वच नांहि ॥ ९ ॥

सत्यवादी ससार का, तसु विषंवाद वच नांहि ।
तो प्रभूजी ना वयण ते, विषंवाद किम थाय ॥१०॥
पूर्वापर अविरुद्ध वच, प्रभु ना समवायङ्ग ।
वच अतिशय पैंतीस में, अतिशय नवम सुचङ्ग ॥११॥
उत्सर्ग में आज्ञा किहां, किहां आज्ञा अपवाद ।
दूआसूं दूक विगटे न ते, पिण नहिं छे विषंवाद ॥१२॥
उत्सर्गे आज्ञा नथी, ते आर्य्य नी जान ।
अपवादे आज्ञा कही, ते विषंवाद मत मान ॥१३॥
विषंवाद रे ऊपरे, कहिये हेतु चार ।
निपुण न्याय वच सांभली, द्वेष हिये मत धार ॥१४॥
बार मास है वर्ष ना, तेह विषे सुविधान ।
अधिक धर्म करिवा तणूं, मास भाद्रवो जान ॥१५॥
ते विषे पर्व प्रगट है, अधिक धर्म ना होइ ।
पर्व पर्यूषण प्रसिद्ध हो, पोसह प्रमुख सुजोइ ॥१६॥
ते पर्यूषण ने विषे, कल्प सूत्र व्याख्यान ।
तेह विषे वतका कही, सुणज्यो सुगुण सुजाण ॥१७॥
प्रभु दशमा सुर लोक थी, भव स्थित भोगव तेह ।
अवियां पहलां ने पछे, आयु अवधि करेह ॥१८॥
चवन समय नवि जाणिये, सूक्ष्म काल विशेष ।
इमहिज पनरमध्ययन में, द्वितीय आचाराङ्ग लेख ॥१९॥

कल्प भने धुर अङ्ग में, चवन काल विहु धार।
एक सरीखा भाखिया, हिव साहरण विचार ॥२०॥
गर्भ साहरण कियो तिहां, कल्प सूत्र में ख्यात।
संहरियां पहिलां पछे, जाण्यु श्री जगनाथ ॥२१॥
संहरता वेलां प्रभू, वर्त्तमान कालेह।
जाण्यु नहिं एहवुं कह्यु, कल्प सूत्र वच एह ॥२२॥
आचाराङ्ग पन्नरमें कह्यो, साहरण प्रथम पश्चात।
वलि साहरतां वार पिण, जाण्यु श्री जगनाथ ॥२३॥
चवन काल तो समय इक, छद्मस्थ नो उपयोग।
असंख्य समय नूं ते भणी, चवन न जाण्यू जोग ॥२४॥
सुर कार्य्य साहरण ते, समय असंख्य सुजाण।
तिण सूं साहरतां प्रभू, जाण्यू अवधि प्रमाण ॥२५॥
साहरतां जाण्यु नही, कल्प सूत्र में ख्यात।
साहरतां जाण्यु कह्यु, धुर अङ्ग जगनाथ ॥२६॥
कल्प सूत्र धुर अंग में, ए बिहु वच आख्यात।
वच सांचो भूठो किसो, देखो तज पखपात ॥२७॥
वीर प्रभू तो एक छे, जाण्यू धुर अंग ख्यात।
नवि जाणयू कल्पे कह्यु, बिहु सांचा किम थात ॥२८॥
उभय मांहिलो एक तो, मिथ्या वचन विशेष।
देखाजो देखो तुम्हे, देखो तज मत टेक ॥२९॥

जाख्यां धुर भङ्ग कह्या, तेह सत्य वच जाण ।
नवि जाण्युं कल्पे कह्युं, ते वयण अप्रमाण ॥३०॥
वृहत्कल्प रे पञ्चमे, तनु कारण थी ताय ।
सूर्य ऊगो जाणि ने, आहार लियो मुनिराय ॥३१॥
भोगवतां शङ्का पड़ी, रवि ऊगो के नाहिं ।
अथवा सूर्य आंथम्यो, तथा आंथम्यो नाहिं ॥३२॥
शङ्क सहित इम भोगव्यां, रात्रि भोजन पिण्ड ।
भोगवतो पामै तिको, गुरू चौमासी दण्ड ॥३३॥
इमहिज कारण बिन रवि, ऊगो जाणी ताय ।
आहार ग्रह्यो पिण शङ्क सहित, भोगवियां दण्ड थाय ३४
दशम उद्देश निशीथ में, रात्रि भोजन ताय ।
कारण सूं पिण भोगव्यां, दण्ड चौमासो थाय ॥३५॥
निशीथ उद्देशे बारमे, चूर्णि विषे अवलोय ।
निशि भोजन कारण थकी, भोगवणो कह्यो सोय ॥३६॥
इमहिज वृहत्कल्प तणी, चुर्णि वृत्ति विषेह ।
रोगादिक कारण मुनी, निशि भोजन जीमेह ॥३७॥
सूत्रे निशि भोजन प्रते, वर्ज्यो ते तो शुद्ध ।
चूर्णि विषे ए स्थापियो, तेह प्रत्यक्ष विरुद्ध ॥३८॥
निशीथ उद्देशे पन्नरमें, आखी श्री जिन वाण ।
सचित अम्ब चूंसे मुनि, दण्ड चौमासो जाण ॥३९॥

भाख्यो चूर्णि में तिहां, मिथ्य अपण्डित सोय।
रोग मिटावा निमित्तें, वैद्य कथन थी जोय ॥४०॥
अथवा मारग चालतां, उणोदरी छे तेह।
पाछसरते जे भोगवे, विरुद्ध कहिजे जेह ॥४१॥
सूत्रे वरज्यो सचित अन्न, चूर्णिकार फुन तेह।
कारण पडियां चूंसवूं, कह्यु विरुद्ध वच एह ॥४२॥
सचित रूंख मुनि जो चढे, तो चौमासिक दण्ड।
निशीथ उद्देशे बारमें, श्री जिन वयण सुमण्ड ॥४३॥
सूत्र निशीथ तणी जिका, चूर्णि विषे इम वाय।
श्वान प्रमुख ना भय हरण, दण्ड ग्रहे मुनिराय ॥४४॥
प्रथम अचित दांडो ग्रहे, पछे मिश्र परितेण।
प्रथम परित्त यावत ग्रहै, अनन्त काय नुं जेण ॥४५॥
रूंख ऊपर मुनि नवि चढे, ए जिन आज्ञा शुद्ध।
चूर्णिकार कह्यु सचित दण्ड, ग्रहे ते वयण विरुद्ध ॥४६॥
ऋषभ भरथ फुन बाहुबलि, ब्राह्मी सुन्दरी बेह।
लख चौरासी पूर्व नूं, आयु तुर्य अङ्गेह ॥४७॥
ऋष मण्डल मांहीं कह्यु, ऋषभ देव भगवान।
भरत बिना बलि ऋषभ ना, पूत निर्वाण जान ॥४८॥
भरत तणा बलि अष्ट सुत, अष्टोतर सौ एह।
एक समय सीझ्या तिको, विरुद्ध वचन छे जेह ॥४९॥

ऋषभ बाहुबलि आउखो, पूर्व चौरासी लख ।
किम तसु शिव गति इक समय, पेखो तज मतपख ॥५०॥
शत चौदसमे भगवती, सप्तम उद्देश विषेह ।
वृत्ति विषे आख्यो तिको, सांभल जो चित देह ॥५१
पन्दरसो प्रतिबोधिया, तापस गौतम स्वाम ।
प्रभू पै आवत पामिया, केवल युग अभिराम ॥५२॥
भो साधो! वन्दो तुम्हे, श्री जिन प्रति शिरनाम ।
इम गोतम आखे छते, जिन भाषे गुण धाम ॥५३॥
ए केवल ज्ञानी तणी, हे गौतम ! मुनिराय ।
लागे तुझ आशातना, वृत्ति विषे ए वाय ॥५४॥
दशवैकालिक सूत्र मे, नवमें ध्ययन विषेह ।
प्रथम उद्देशे ग्यारमी, गाथा में इम लेह ॥५५॥
विप्र अग्निहोत्री तिको, अग्नि प्रते शिरनाम ।
आहुती पद मन्त्र पद, घृतादि सींचै ताम ॥५६॥
आचार्य प्रते इह विधे, वारूं शिष्य विनीत ।
वर अनन्त ज्ञानी छतो, आराधे इह रीत ॥५७॥
हरीभद्र सूरे करी, वृत्ति विषे इम उक्ति ।
शिष्य केवल ज्ञानी छतो, करे गुरूनी भक्ति ॥५८॥
कह्यु वृत्ति में जिन प्रते, वन्दो गौतम ख्यात ।
तसु प्रभू कही आशातना, किम मिले ए बात ॥५९॥

गुरु वन्दे शिष्य केवली, सूत्र विषे इम ख्यात ।
तो प्रभु वन्दो इम कह्यां, आशातन किम थात ॥६०॥
सचित आहार मुनि ने अभक्ष, पञ्चम अङ्ग प्रबन्ध ।
ज्ञाता अध्ययने पञ्च मे, निरावलिया श्रुतस्कन्ध ॥६१॥
द्वितीय आचाराङ्ग लागतां, आधाकरमी आहार ।
अप्राशुक पिण्ड वृत्ति मे, भोगवणुं कह्युं धार ॥६२॥
कह्यो अफासु अभख जिन, वृत्ति विषे फुन तेह ।
कह्यु भोगवणो कारणे, विरुद्ध वचन छे एह ॥६३॥
शत पणवीसम भगवती, छट्ठा उद्देशा मांहि ।
बकुश उत्तर गुण तणो, पडिसेवी कह्युं ताहि ॥६४॥
तिणज उद्देशे वृत्ति में, बकुश प्रति इम ख्यात ।
मूल उत्तर पडिसेविये, तेह विरुद्ध सञ्जात ॥६५॥
ठाणा अङ्ग ठाणे चतुर्थ, प्रथम उद्देशे पेख ।
सनत कुमार तणी कही, अन्त क्रिया सुविशेष ॥६६॥
आवश्यक निर्युक्ति में, उत्तराध्ययन वृत्ति मांहि ।
तीजे स्वर्ग गयुं कह्यो, मिले नहिं ए वाय ॥६७॥
अष्टम शतके भगवति, द्वितिय उद्देशा मांहि ।
एकेन्द्री निश्चय करी, कह्या अज्ञानी ताहि ॥६८॥
कर्म्मग्रन्थ में देखल्यो, एकेन्द्री रे मांहि ।
बे गुणठांणा आखिया, तेह विरुद्ध कहाहि ॥६९॥

शतक सात में भगवती, छट्ठे उद्देश सम्वेद।
छट्ठे आर वैताढ्य विन, सह गिर हुस्ये विछेद ॥७०॥
प्रकरण में शत्रुञ्ज गिरि, सप्त हस्त परिमाण।
रहिस्ये आख्यो तेह वच, प्रत्यक्ष विरुद्ध पिछाण ॥७१॥
अष्टम: शतके भगवती, नवम उदेश विषेह।
मायी गूढ माया करै, वचन अलीक वदेह ॥७२॥
कूड़ा तोला ने बलि, कूड़ा माप करेह।
ए च्यारूंई प्रकार करि, तौरि आयु बन्धेह ॥७३॥
ए चिहुं कारण अशुभ थी, तौर्यंच आयु बन्ध।
तिण कारण तिर्यञ्च नूं, आयु पाप कथिन्ध ॥७४॥
कर्म्मग्रन्थ मांही कह्यो, तिर्यञ्च आयु पुन्य।
ते माटे ए सूत थी, वचन विरुद्ध जबुन्य ॥७५॥
पञ्च स्थावर विकलेन्द्रिया, ए पिण तिर्यञ्च जाण।
तास आउषो पुन्य कहै, प्रत्यक्ष विरुद्ध पिछाण ॥७६॥
जघन्य आउषा नुं धणी, तिर्यञ्च मरि ने तेह।
जो तिर्यञ्च में ऊपजे, कोड़ि पूर्व स्थित लेह ॥७७॥
जघन्य आयु पञ्च तिरि तणा, माठा अध्यवसाय।
कह्या भगवती नें विषे, शतक चौवीसमा मांहि ॥७८॥
अपसत्थ अध्यवसाय सूं, कोड़ि पूर्व तिरि होय।
तिण सूं ए तिरी आउषो, पाप क्रांत अवलोय ॥७९॥

कुल चाण्डाले ऊपनो, हरकेशी मुनिराय।
उत्तराध्ययन विषे कह्युं, बारमा अध्ययने मांय ॥८०॥
कर्म्मग्रन्थ मांही कह्यो, छट्ठे गुणठाणेह ।
नीच गोत नो उदय नहीं, न्याय मिले किम तेह ॥८१॥
अष्टम शतकि भगवती, दशम उद्देशे इष्ट।
जघन्य ज्ञान आराधना, सत अठ भव उत्कृष्ट ॥८२॥
वृत्तिकार कह्यु एह विध, चरित सहित जे ज्ञान।
तेहनी जघन्य आराधना, तसु भव ए पहिचान ॥८३॥
बीजा समदृष्टि तणा, देश व्रती ना जेह ।
भव उत्कृष्ट असंख्य है, न्याय बचन छे एह ॥८४॥
चन्दा विजय ग्रन्थ में, आराधक ना सोय।
आख्या भव उत्कृष्ट तणा, एह मिले नहिं कोय ॥८५॥
अष्टम अङ्गे नेम प्रभू, कृष्ण भणी आख्यात।
तूं तीजी पृथिवी विषे, जास्ये स्थित दधि सात ॥८६॥
तीजी थी अन्तर रहित, निकली सय बारेह।
असम नाम द्वादशम् जिन, थास्ये महा गुण तेह ॥८७॥
इहां आख्यो अन्तर रहित, तृतीय नरक थी ताहि।
निकली तीर्थंङ्कर हुस्ये, तिण सु बिच भव नांहि ॥८८॥
प्रकर्ण रत्तन संचय विषे, आख्यो कृष्ण मुरार।
बालु प्रभा थी नीकली, नर भव लही उदार ॥८९॥

ब्रह्म कल्प मे सुर थई, हुस्ये तीर्थङ्कर देव।
इम आख्या तसु पञ्च भव, किम मिले ए भेव ॥६०॥
इत्यादिक जे सूत्र थी, वृत्ति प्रमुख रे मांहि।
विरुद्ध बचन छे ते प्रते, किम मानिजे ताहि।६१॥
द्वितीय आचाराङ्ग ने विषे, दशम उद्देशे मांय।
मंस मच्छ कह्यो पाठ में, तास अर्थ कहिवाय ॥६२॥
टबो पार्श्वचन्द्र सूरि कृत, तेह विषे इम ख्यात।
वृत्तिकार ए मांस मच्छ, लोक प्रसिद्ध आख्यात ॥६३॥
विरुद्ध सूत्र सु ते भणी, न संभाविये ए अर्थ।
वलि गीतार्थ जे वदे, प्रमाण छे ज तदर्थ ॥६४॥
अस्थी शब्दे सूत्र में, कुलिया छे बहु स्थान।
एगट्ठिया हरड़े कह्यु, सूत्र पन्नवणा जान ॥६५॥
कह्या दाडिम प्रते बहुट्ठिया, एहवा शब्द प्रभूत।
अस्थि शब्द कुलिया कह्या, तो मंस शब्द गिर हुन्त ॥६६॥
एहवो संभाविये अछे, ते माटे अवलोय।
बनस्पतिज विशेष छे, मंस मच्छ ए जोय ॥६७॥
भाव उघाड़े मंस मच्छ, चारित्रिया ने जेह।
कारण थी पिण आहारवो, योग्य नथी दीसेह ॥६८॥
वली सूत्र में साधु ने, उत्सर्ग भाव आख्यात।
वृत्ति विषै अपवाद ए, भाव तणो अवदात ॥६९॥

तिण जे विशेष सूत्र नो, अर्थ उत्सर्ग पणेह ।
जेम अछे तिम हिज मिले. इम कह्यु टबा विषेह ॥१००॥
टबाकार पिण इम कह्यो, सूत्र थकी विगटेह ।
अर्थ प्रमाण तिको नहीं, तो मुझ दूषन किम देह ॥१०१॥

॥ इति विषंवाद अधिकार ॥

॥ अथ अठारमूं भगवती में निर्युक्ति कही तथा पन्नवणा सामाचार्य्य कृत कहै तसुत्तर अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै निर्युक्ति कही, शत पणवीसमा माहिं ।
तृतीय उदेशे भगवती, तुम्हे न मानूं काहिं ॥१॥
तसु पूछीजे निर्युक्ति, किहनी कीधी जेह ।
भद्रबाहु कृता तब कहै, चौद पूर्वधर तेह ॥ २ ॥
तसु कहियै जे तुम्है कही, भद्रबाहु कृत एह ।
तो भगवती सूत्र विषे तिका, किम कही छै तेह ॥ ३॥
वीर छतां ए भगवती, तेह विषे अवधार ।
किम कहि भद्रबाहु कृता, देखो न्याय विचार ॥ ४ ॥
भद्रबाहु मोड़ा हुआ, पञ्चम अर्क सुजात ।
चौथ अरकी भगवती, तेह विषे किम थात ॥ ५ ॥

ग्रामो नास्ति सीम कुतः, भद्रबाहु अणगार।
नथी हुन्ता तो तसु कृता, किम निर्युक्ति तिंवार ॥६॥
सूत्र भगवती ते विषे, कही निर्युक्ति जेह।
तेह मानवा योग्य छै, पिण हिवडां नहिं तेह ॥ ७ ॥
तब कहे पट तेवीस में, सामाचार्य्य ताहि।
सूत्र पन्नवणा तिण कर्‌यु, कह्यो पीठका मांहि ॥ ८ ॥
गणधर कृत ते भगवती, तेह विषे सुविचार।
नाम पन्नवणा नो कह्यो, ते किण विध अवधार ॥ ९ ॥
तसु कहिये ते पन्नवणा, सामाचार्य्य जोय।
मोटा नो छोटो करी, एहवु दीसे सोय ॥१०॥
पिण सूत्र थकी कीधो नवी इसो सम्भवे नाहिं।
दश पूर्वधर ते नहीं, तसु कीधी किम थाय ॥ ११ ॥
सम्पूर्ण दश पूर्व धर, चौदश पूर्व धार।
तास रचित आगम हुवे, वारू न्याय विचार ॥१२॥
हेमि नाम माला विषे, धुर काण्डे अवदात।
सुहस्ताद्या वज्रान्ता, दश पूर्व धर आख्यात ॥१३॥
सुहस्त से लेई करी, वज्र स्वामी लग जोय।
दश पूर्व धर दाखिया, अधिक पूर्व नहिं होय ॥१४॥
स्वामी वज्र थयां पछै, बहु वर्षे सुविमास।
सामाचार्य्य तो थया, दश पूर्व नहिं जास ॥१५॥

तसु कृत आगम किम हुवै, न्याय नैन करि जोय ।
सूत्र वृहत् नो लघु करै, तसु कारण नहिं कोय ॥१६॥
इमहिज सूत्र निशीथ प्रति, गणी विसाह विचार ।
मोटा नूं छोटो कर्‌यु, एहवुं दीसै सार ॥१७॥
वलि कहै दशवैकालिक पिण, कर्‌यु सौजम्भव एह ।
तास नाम नन्दी विषे, किम भाख्यो गुण गेह ॥१८॥
गणधर कृत जी भगवती, तास विषे सुविचार ।
नाम नन्दी नूं पिण कह्यो, हिव तसु उत्तर सार ॥१९॥
जेम पन्नवणा तिमज ए, वृहत् थकी लघु कीध ।
पिण मूल थकी कीधो नवो, नथी सम्भवे सीध ॥२०॥
चौदश पूर्व मांहि थी, अर्थ अनोपम सार ।
दशवैकालिक वृहत् पिण, पूर्वे रचित उदार ॥२१॥
ते मोटा नूं ए लघू. मनक पुत्र अर्थेह ।
सूत्र सौजम्भव पिण कर्‌यु, न्याय सम्भवे एह ॥२२॥

॥ इति निर्युक्ति अधिकार ॥

॥अथ १९ मूं नंदी थिरावली अधिकार॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै नन्दी तणी, थिरावली छै तेह ।
गणधर कृत कै अन्य कृत, हिव तसु उत्तर देह ॥ १ ॥

नन्दी पीठका ने विषे, सुधर्म जम्बू स्वाम ।
प्रभव सीजम्भव आदि त्यां, पाठ वन्दे बहु ठाम ॥ २ ॥
अनागत जिन तूर्य अङ्ग, वन्दे पाठ न ख्यात ।
तेह अनागत मुनि भणी, किम वंदे गणीनाथ ॥ ३ ॥
तिण सूं एह थिरावली, देव वाचक कहिवाय ।
पिण गणधर कृत ए नहीं, निर्मल विचारो न्याय ॥ ४ ॥
थिरावली ने अन्त कह्यु, अन्य पिण सहु भगवन्त ।
प्रणमी ज्ञान प्ररूपणा, कहस्यु तास उदन्त ॥ ५ ॥
नन्दी सूत्र नी वृत्ति में, आख्यो इम अवदात ।
दुष्य गणी नो शिष्य जे, देव वाचक इम ख्यात ॥ ६ ॥
इण लिखे नन्दी सूत्र, दुष्य गणी शिष्य देव ।
मोटा नं छोटो कह्यु, ते जाणे जिन भेव ॥ ७ ॥
कथा तणी गाथा जिके, नन्दी सूत्र रे मांहि ।
देव वाचक कीधी हुवे, एहवु दीसे न्याय ॥ ८ ॥
दश चौदश पूर्व धरा, आगम रचे उदार ।
ते पिण जिननी साख थी, विमल न्याय सुविचार ।६।
पिण जिननी ऊ साख विन, आगम सूत्र अमोल ।
छद्मस्थ कृत किण विध हुवे, ताजु न्याय सूं तोल ॥१०॥
चौनाणी गोयम गणी, चौदश पूर्व धार ।
ते पिण वचन खलाविया, सप्तम अङ्ग मझार ॥११॥

दृष्टिवाद तणो धणी, वचन खलायां ताहि।
अन्य मुनी ने हंसतो नहीं, दशवैकालिक मांहि ॥१२॥
पञ्चम अङ्ग तृतीय शत, प्रथम उद्देशे ताय।
वैक्रिय शक्ति सुर तणी, अग्नि भूति कहिवाय ॥१३॥
वाय भूति श्रद्धी नहीं, प्रतीत नाणी तेह
प्रभू ने पूछ खमाविया, द्वादशाङ्ग धर एह ॥१४॥
ठाणा अङ्ग ठाणे सातमें, हिन्सा झूठ अदत्त।
शब्द रूप गन्ध फर्श रस, आस्वादी हुवे रक्त ॥१५॥
वलि पूजा सत्कार प्रति, पामो ने हर्षाय।
सावद्य दे इह विध कही तास सेववूं थाय ॥१६॥
जेम प्ररूपे ते विषे, नथी पालवूं होय।
सप्त प्रकारे जाणवूं छद्मस्थ प्रति अवलोय ॥१७॥
चौद पूर्व धर पिण करे, पडिक्कमणो विहुं काल।
खलता स्वामी नुं तिको, देखो न्याय निहाल ॥१८॥
तिण सुं चौदश पूर्व धर, वलि दश पूरव धार।
जिन साखि आगम रचे, इसो सम्भवे सार ॥१९॥
इमहिज प्रत्येक बुद्धि पिण, जिन साखे सुविचार।
आगम रचवुं सम्भवे, असल न्याय अवधार ॥२०॥
इम सुभ ध्यासे तिम कह्युं अर्थ अनूप उदार।
फुन केवलज्ञानी कहे, तेहिज छे तन्त सार ॥२१॥

जद कहै चौदश पूर्व धर, भद्रबाहु गुन गेह।
निर्युक्ति तेहनी करी, किम मानूं नवि तेह ॥२२॥
हिव तेहनो उत्तर सुनो, तेह निर्युक्ति मांहि।
हूं वादूं वज्र स्वामी प्रते, एम कह्युं छै ताहि ॥२३॥
जो भद्रबाहु कृत ए हुवे, तो वज्र स्वामी प्रति जेह।
नमस्कार किण विध करे, देखोजी चित देह ॥२४॥
वलि निर्युक्ति मे कह्यो, बाल्य अवस्था मांहि।
मेह वर्षतां देवता, आहार निमन्त्र्यो ताहि ॥२५॥
पिण ते आहार वञ्छ्यो नहीं, सीख्यो विनय आचार।
एहवा वज्र स्वामी प्रते, नमस्कार करूं सार ॥२६॥
नगर उज्जेणी ने विषे, जम्बक नामे देव।
करी परीक्षा ने पछे, स्तव्यो तास स्वयमेव ॥२७॥
लब्धि अक्षीण माहणसी, तेह तणो धरणहार।
सीह गिरी प्रशंसियो, वन्दू ते अणगार ॥२८॥
महासारखी लब्धि जसु, दश पुर नगर मझार।
महिमा कीधी देवता, करूं तासु नमस्कार ॥२९॥
जेह कुसुमपुर ने विषे, धन्नो शेठ जिंवार।
धन पुन कन्याइं करी, निमन्त्रियो धर प्यार ॥३०॥
नव जोवन वय ने विषे, वज्र ऋषि गणधार।
नमस्कार तेहने करूं, इम कह्यो निर्युक्ति मझार ॥३१॥

भद्रबाहु स्वामी पछे, बहु वर्षे अवधार।
वज्र स्वामी मोड़ा हुवा, देखो न्याय विचार ॥३२॥
निर्मिविये कन्या धनै, एम इहां आख्यात।
पिण निमन्त्रसी इम नथी कह्यो, देखो सुगण सुजात ।३३।
महिमा कीधी देवता, इम इहां आख्यो सोय।
सुर करस्ये महिमा इसो, वचन कह्यो नहीं कोय ॥३४॥
तिण कारण ए नियुक्ति, भद्रबाहु कृत नांहि।
वलि ए नियुक्ति विषे, वचन बहु विरुद्ध दिखाहि ।३५॥
उववाई में आखियो, उत्कृष्टी अवगाह।
धनुष पंचसय नो तिको, सीझे ए जिन वाय ॥३६॥
आवश्यक नियुक्ति में, मोरादेवी माय।
सवा पांचसौ धनुष तनु, ए वच कैम मिलाय ॥३७॥
ठाणाङ्ग तूर्ये ठाणा विषे प्रथम उदेशा मांहि।
सनत् कुमार चक्री तणी, अन्त क्रिया कही ताहि ॥३८॥
आवश्यक नियुक्ति में, चक्री सनत् कुमार।
तीजे सुरलोके गयो, ए वच विरुद्ध विचार ॥३९॥
ऋषभ बाहुबल आउषो, पूर्व चौरासी लक्ष।
समवायङ्ग मे आखियो, पाठ मांहि प्रत्यक्ष ॥४०॥
आवश्यक नियुक्ति में, ऋषभ बाहुबल राय।
एक समय शिवगत लही, कैम मिलै ए वाय ॥४१॥

ज्ञाताध्यने आठमे मल्लीनाथ जिनराय ॥
पोह सुद इगारस दिने, चारित्र केवल पाय ॥४२॥
आवश्यक निर्युक्ति मे, चारित्र केवल नाण ।
मृगशिर सुद एकादशी, विरुद्ध वचन ए जान ॥४३॥
नेऊ गणधर अजित ना, समवायङ्ग विशेह ।
आवश्यक निर्युक्ति में, कह्या प्रचाणूं जेह ।
तूर्य अङ्ग जिन सुविध ना, असी अरु षट गणधार ।
आवश्यक निर्युक्ति में अठ्यासी अधिकार ॥४५॥
तूर्य अङ्ग शीतल तणा, तीन असी सुविचार ।
आवश्यक निर्युक्ति मे, एक असी गणधार ॥४६॥
तूर्य अङ्ग बासट कह्या, वास पूज्य गणधार ।
आवश्यक निर्युक्ति मे, छासट्ठ कह्या तिंवार ॥४७॥
गणधर अनन्त प्रभू तणा, सूत्रे चौपन जास ।
आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या छे पचास ॥४८॥
गणधर धर्म प्रभू तणा, सूत्रे अड़तालीस ।
आवश्यक निर्युक्ति मे तयांलीस फुन दीस ॥४९॥
नेऊ गणधर शान्ति ना, तूर्य अङ्ग सुजगीस ।
आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या छे षट तीस ॥५०॥
पार्श्व प्रभू ना तूर्य अंग, गणधर अष्ट उदार ।
आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या दश गणधार ॥५१॥

आवश्यक निर्युक्ति मुनि, कृत पञ्चक में काल।
पञ्च डाभ ना पूतला, करवा कह्या जु न्हाल ॥५२॥
आवश्यक निर्युक्ति में, वतिका विरुद्ध अनेक।
चतुर हुवे ते ओलखो, छांडै मत री टेक ॥५३॥
तिण सुं चौदश पूर्वधर, भद्रबाहु अणगार।
तेहनी कीधी किम हुवे, ए निर्युक्ति विचार ॥५४॥
आवश्यक निर्युक्ति में, कारण थी अणगार।
ग्रहण करे षट काय ने, कहिये ते अधिकार ॥५५॥
सर्पादिक डसियां छतां, पृथ्वीकाय प्रतेह।
प्रथम अचित मांगी लिये, ग्रहस्थ समीपे जेह ॥५६॥
जो मांगी लाधे नहीं, तो पोते आणेह।
कदा अचित लाधे नहीं, तो मिश्र पृथ्वी मांगेह ॥५७॥
मिश्र पृथ्वी लाधे नहीं, तो पोतेहिज जाय।
अटव्यादिक थी मिश्र प्रति, ले आवे मुनिराय ॥५८॥
मिश्र कदा लाधे नहीं, मांगे जई ग्रहस्थी पास।
सचित पृथ्वीकाय प्रति, मांगी ल्यावे तास ॥५९॥
जो मांगी सचित मिले नहीं, तो पोतेहिज जाय।
खान प्रमुख आगर थकी, ले आवे मुनिराय ॥६०॥
जेह काम आणी तिको, कार्य्य करी ने ताय।
पृथ्वीकाय जे ऊबरे, ते परिठ्ठवे जाय ॥६१॥

द्रुम कारण थी धुर अचित, मिश्र सचित अपकाय।
मुनि दातार कने जई, मांगी ल्यावे ताय ॥६२॥
जो मांग्यो जल ना मिले, तो पोतेहिज जाय।
नदी तलावादिक थकी, आप आणे मुनिराय ॥६३॥
शूलादिक कारण पड्यां, द्रुमहिज तेऊकाय।
अचित मिश्र फुन सचित प्रते, मांगे ग्रही पे जाय ॥६४॥
जो मांगी अग्नि मिले नहीं, तो पोतेहिज जाय।
कुम्भकारादिक स्थान थी, लेइ आवे मुनिराय ॥६५॥
शूलादिक कारण पड्यां, द्रुमहिज वाऊकाय।
अचित मिश्र फुन सचित प्रति, ग्रहण करे ऋषि ताय ॥६६
द्रुमहिज वनस्पति अचित, मिश्र फुन सचित मुनिराय
गाढा गाढ कारण पड्यां, ग्रहे मूलादिक ताय ॥६७॥
त्रस बेन्द्रियादिक प्रते, तनु फोडादिक होय।
ताम मिटावे मुनि ग्रहे, जलोक आदि सुजोय ॥६८॥
आवश्यक निर्युक्ति में, परिट्ठावणिया समितेह।
आखी छे ए वारता, किम मानीजे एह ॥६९॥

॥ इति थिरावली अधिकार ॥

॥ अथ बीसमूं नदी अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै नदी उतरे, मुनि ईर्य्या समितेह ।
तिहां जिन आज्ञा ते भणी, हिंसक तसु न कहेह ॥१॥
तिम कहै जिन प्रतिमा भणी, पुष्प चढ़ावा तेह ।
म्हांने पिण जिन आण छै, हिंसा तसु न कहेह ॥ २ ॥
तसु कहिये साधू नदी, उतरै तिहां जिन आण ।
जो पूजा में जिन आण छै, तो मुनि किम न करै जाण ।३।
वन्दना नी पूछ्यां थकां, मुनि आज्ञा दे तेह ।
पुष्प चढ़ावूं इम कह्यां, मुनि, आज्ञा नहिं देह ॥ ४ ॥
नदी ऊतरै जे मुनि, द्रव्य पूजा कहै तेम ।
हेतु तिण ऊपर कहूं, चतुर सुणो धर पेम ॥ ५ ॥
विहार विषे जल सहित इक, नदी देख मुनिराय ।
ते टालण रै कारणे, अंवलाई पिण खाय ॥ ६ ॥
इक कोशादिक अन्तरे, सूकी नदी निहाल ।
तेह प्रतै मुनि ऊतरै, उदक सहित दे टाल ॥ ७ ॥
तिम दश दिननां पुष्प जे, सूका ते अवलोय ।
एकण आडी पुष्प पुन, तत्क्षण चूंट्यां होय ॥ ८ ॥
किसा चढावो पुष्प तुम, तुम्ह लेखे इम न्हाल ।
सूका फूल चढावणा, हरिया देणा टाल ॥ ९ ॥

जो चाढो तत्काल ना, शुष्क पुष्प न चढाय ।
जद तो पुष्प नदी तणो, मिल्यो न सरिषो न्याय ।१०।
उदक सहित टाले नदी, मुनि अंवलाई खाय ।
तिण कारण हणवा तणु, ते कामी नहिं ताय ॥११॥
हरित पुष्प चाढ़ो तुम्हे, शुष्क पुष्प न चढ़ाय ।
इण कारण हणवा तणा, तुम्हे कामी इण न्याय ॥१२॥
तिण सुं पुष्प नदी तणो, नथी सरिषो न्याय ।
द्रव्य पूजा नी आण नहीं, नदी जिन आज्ञा मांय ॥१३॥
जिन आज्ञा देवे जिको, निर्वद्य कारज जान ।
जिन आज्ञा देवे नहीं, ते सावद्य कार्य्य मान ॥१४॥
सुर सुर्याभ भणी प्रभु, वन्दन आज्ञा ख्यात ।
नाटक नी पूछ्यां थकां, आण न दीधी नाथ ॥१५॥
मन में भलो न जाणियो, मौन रह्या अवलोय ।
तिण सुं ए नाटक कियो, ते सावद्य कार्य होय ॥१६॥
प्रभूजी जे नाटक तणी, आज्ञा दीधी नांय ।
तो किम द्रव्य पूजा तणी, आज्ञा दे जिनराय ॥१७॥
मुनि दीक्षा लेतां किया, सावद्यरा पचखान ।
न करै द्रव्य पूजा तिको, सावद्य कार्य्य मान ॥१८॥
सावद्य कार्य प्रते मुनि, करै करावे नांय ।
अनुमोदे पिण नहिं तिको, निमल विचारो न्याय ॥१९॥

जेह कारये अनुमोदियां, मुनि ने लागे पाप।
तो करणवालो तो धुर करण, तिण में धर्म न थाप ॥२०॥
सावद्य कार्य सर्व ही, मुनि त्यागे विष जाण।
आज्ञा तेहनी किम दियै, वाह्' करो विनाण ॥२१॥
द्रव्य पूजा सावद्य छै के निर्वद्य कहिवाय।
सावद्य छै तो तेह में, धर्म्म पुण्य किम थाय ॥२२॥
जो पूजा निर्वद्य छै, तो मुनि न करै कांय।
वलि सामायिक पोषा मझै, तुम्हे करो क्यूं नांय ।२३।
सामायिक पोषा मझै, पचख्या सावद्य जोग।
निर्वद्य तो त्याग्या नहीं, देखो दे उपयोग ॥२४॥
द्रव्य पूजा आज्ञा मझे, की जिन आज्ञा बार।
जो आज्ञा बारे कहो, तो धर्म पुण्य मत धार ॥२५॥
जो ए छै आज्ञा मझै, तो मुनि न करै कांहि।
सामायिक पोषा मझै, तुम्हे करो क्यु' नांहि ॥२६॥
द्रव्य पूजा छै विरत मे, के अविरत रै मांय।
जो अविरत मांहीं कहो, तो धर्म्म पुण्य किम थाय ।२७।
द्रव्य पूजा छै विरत में, तो मुनि क्युं न करेह।
सामायिक पोषा मझे, क्यों न करो तुम्हे तेह ॥२८॥
जो पूरी समझ पड़े नहीं तो राखो प्रभू प्रतीत।
जिन आज्ञा बाहर धर्म्म कहो, न करणी एह अनीत ॥२९॥

॥ इति नवमी अधिकार ॥

॥ अथ इक्कीसमूं दानाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

असंयती ने जाण ने, वा श्रावक ने कोय ।
दान दियां स्युं फल हुवे, तसु उत्तर अवलोय ॥ १ ॥
अष्टम शतके भगवती, छट्ठे उद्देशे जोय ।
गौतम पुछ्यो वीर प्रति, हे प्रभू ! श्रावक कोय ॥ २ ॥
तथा रूप जे असंजति, तसु सचित्त अचित अशणादि ।
अणेषणी फुन एषणीक, प्रति लाभ्ये स्युं सम्वाद ॥३॥
तेहने स्युं फल सम्पजे, तब भाषे जिनराय ।
एकान्त पाप हुवे तसु, निरजरा किञ्चित नांय ॥ ४ ॥
एकान्त पाप कह्यो प्रभू. प्रकट पाठ मे जोय ।
तो ते दान दियां छतां, धर्म्म पुण्य किम होय ॥ ५ ॥
वलि सातमां अङ्ग मे, प्रथम अध्ययन मझार ।
वीर भणी आणन्द कह्यो, अन्य तीर्थी प्रति धार ॥ ६॥
अन्य तीर्थिक ना देव प्रति, फुन जिन ना मुनिराय ।
अन्य तीर्थिक मे जई मिल्या, तिणे संग्रह्या ताय ॥ ७॥
ए तिहुं प्रति वन्दूं नहीं, वलि न करूं नमस्कार ।
पहली बोलाऊं नहीं, एक बार बहु बार ॥ ८ ॥
अशणादि नहिं दुं तसु, वलि देवावूं नाहिं ।
एहवुं अभिग्रह आदर्यो, देखो आगम मांहिं ॥ ९ ॥

तिम सावद्य दान प्रशंसियां, कर्म्म तणो बंध थाय।
तो दान दियै ते घुर करण, तसु अघ बंध अधिकाय ॥३०॥
दान निषेद्यां वृत्तिनी, छेद करै इम ख्यात।
कह्यो अर्थ में काल ए, वर्त्तमान में घात ॥३१॥
मिलतो अर्थ ए सूत्र थी, देखो न्याय विचार।
ठाम ठाम सूत्रे कह्यो, सावद्य दान असार ॥३२॥
असंजती ने दान दे, पाप एकान्त आख्यात।
सूत्र भगवती ने विषे, देखो तज पखपात ॥३३॥
ते माटे वर्त्तमान जे, काल विषे जे मून।
मून कहे तिहुं काल में, अज्ञा तास जवून ॥३४॥
द्वितीय सूयगडांगे विषे, पञ्चमाध्ययने पेख।
देतो लेतो एहवो, वर्त्तमान में देख ॥३५॥
पुण्य पाप नहिं कहे तिहां, एहवुं वच अवलोय।
ते माटे वर्त्तमान हिज, काले मून सुजोय ॥ ३६॥
कह्यो उपासक अङ्ग में, सुत सकडाल उदार।
गोशालक ने आपिया, फलग सेज्भा संथार ॥३७॥
कह्यो प्रभू ना गुण कह्या, तिण स्युं आपूं सोय।
पिण निश्चय नहिं धर्म्म तप, इम कह दीधा जोय ॥३८॥
दीधां गोशालक भणी, नहीं धर्म्म तप सद्य।
तिमज अनेरा ने दियां, किम हुवे पुण्य बन्ध ॥३९॥

जीमावे द्विज सहस्त्र बे तसु पुण्य खन्ध बंधाय ।
तेह पुण्य थी सुर हुवे, वेद विषे ए बाय ॥२०॥
आद्र मुनि कह्यो सहस्त्र बे, दीहा जीमावे जेह ।
तेह नरक में ऊपजे, अति अभिताप विषेह ॥२१॥
प्रगट पाठ में बात ए, आद्र मुनि वच जोय ।
तो असंयती रा दान मे, धर्म्म पुण्य किम होय ॥२२॥
कोई कहे छद्मस्थ था, आद्र मुनि तिहवार ।
कह्यं ताण मे तेह वच, किम कहिये तसु सार ॥२३॥
तसु कहिये आदर मुनि, चरचा करी विशाल ।
बौद्ध मती गोशाल सूं, साग मती सूं न्हाल ॥२४॥
एक डणिडया प्रमुख ने, उत्तर दिया विचार ।
तेह सत्य जाणो तुम्हे, तो ए पिण सत्य उदार ॥२५॥
जाव अन्य प्रति सत्य छे, ब्राह्मण प्रति अवदात ।
उत्तर असत्य कहो तुम्हे, आ किसा लेखा री बात ॥२६॥
सूत्र सूयगडांग द्वारसे, दान प्रशंसे सन्त ।
वध बछे षट काय नो, इम भाख्यो भगवन्त २७॥
तृतीय करण प्रशंसियां, हिन्सक कहिये ताहि ।
तो दान देवे ते धुर करण, ते हिंसक किम नाहिं ॥२८॥
करे प्रशंसा कुशील री, तासु कर्म्म बन्ध होय ।
तो सेवे ते तो धुर करण, स्यूं कहिये तसु सोय ॥२९॥

नित्य हजारां मण तदा, धान रांधता जाण।
हुवै हजारां मण तिहां, अग्नि पाणी घमसाण ॥५०॥
उदक विषे फुंवारादि फुन, वलि वनस्पति जल मांय।
लूण मणां बन्ध लागतो, अनेक मूवा तसकाय ॥५१॥
वायु जीव विराधना, ते पिण तिहां विशेष।
मोटो आरम्भ ए सही, दानशाला में देख ॥५२॥
दिन दिन प्रति षटकाय हण, अनन्त जीवांरी घात।
न गिणै पाप हिंसा तणो, तसु घट मांहि मिथ्यात ॥५३॥
असंयती बहु पोषियां, करै षटकाय विणाश।
धर्म पुण्य किम तेह में, जोवो हिये विमास ॥५४॥
धर्म हेतु प्रति जीव ने, हणियां दोष न कोय।
कह्युं अनार्य बचन ए, आचारङ्गे, जोय ॥५५॥
कह्यो धर्म रे कारणे, जीव न हणवूं कोय।
ए आर्य नो बचन है, धुर अङ्ग अवलोय ॥५६॥
तिण सूं प्रदेशी तणी, दानशाला पहिचाण।
श्री जिन आज्ञा बार है, समझो चतुर सुजाण ॥५७॥
ज्ञाता अध्ययने तेरमें, जे नन्दन मणिहार।
नन्दा पुष्करणी तणो, आख्यो बहु विस्तार ॥५८॥
चिहुं दिश च्यारुं बाग फुन, चिहुं बाग चिहुं शाल।
पूरब बाग विषे प्रवर, चित्रशाला सुविशाल ॥५९॥

दुःख विपाक मांही कह्यो, मृगालोढो देख ।
गौतम पूछ्यो वीर प्रति; पूर्व भवे इम पेख ॥४०॥
स्यूं दीधो स्यूं भोगव्यो, इम पूछ्यो गणिराय ।
तिण सुं दान कुपात्र ना, फल अति कटुक कहाय ॥४१॥
प्रदेशी केशी भणी, बोल्यो एहवी वाय ।
च्यार भाग ए राज रा, हूं करस्युं मुनिराय ॥४२॥
एक भाग राणयां निमित्त, दूजो भाग खजान ।
तीजो हय गय अर्थ ही, चौथो देवा दान ॥४३॥
च्यारूं सावद्य जाण ने, मौन रह्या मुनिराय ।
तीन भाग जिम तूर्य पिण, जाणी सावद्य ताय ॥४४॥
पिण न कह्यो त्रण भाग तो, हेतु पाप नी राश ।
तूर्यं भाग तो पुण्य बन्ध, इम न कह्यो गुण तास ॥४५॥
च्यारूं भाग बोलाय ने, प्रदेशी राजान ।
निज लफरो मेटी थयो, धर्म करण सावधान ॥४६॥
तूर्यं भाग दान तालकें, नित प्रते धान रंधाय ।
बणी मग रांक जिमायिवे, तिहां जीव हिंसा अधिकाय ४७
सप्त संहस्र जे ग्राम नां, च्यार भाग तसु कीध ।
दान तालके थापियो, चौथो भाग प्रसिद्ध ॥४८॥
दान तालके ग्राम था, साढ सतरे सौ जेह ।
तसु हांसल धान रंधाय ने, दानशाला मांडेह ॥४९॥

रुधिरै खरड्यो वस्त्र जे, जलादि करि शुद्ध होय।
तिम हिंसादिक अघ तज्यां, जीव निमल हुवै सोय॥७०॥
सचित अचित सहु ने दियां, पुण्य कह्रै छै जेह।
कीड़ायत चोखी तथा, न्याय विचारी लेह ॥७१॥
दशमें ठाणे देखल्यो, प्रभू कह्या दश दान।
संक्षेपे कहिये तिके, सुणजो चतुर सुजाण ॥७२॥
सचित अचित जल अन्न लवण, अग्नि जमीकन्द जान।
अनुकम्पा आणी देवे, ते अनुकम्पा दान ॥७३॥
द्वितीय दान संग्रह कह्यो, पोषे वन्दीवान ।
तथा छुड़ावे दाम दे, चोर प्रमुख ने जाण ॥७४॥
ग्रह करड़ा जाणी करी, थावरिया ने जान।
देवे भय आणी करी, ते तीजो भय दान ॥७५॥
खर्चे करै मृत केड़ वा, जीवत बारियो जान।
श्राद्ध छमासी प्रमुख ते, तूर्य कालूणी दान ॥७६॥
बहु नी लज्जाइं करी, सचित अचित धन धाम।
दिये असंजती ने जिको, पञ्चम लज्जा दान ॥७७॥
मुकलावो पैरावणी, जश अहङ्कारे जान ।
दिये रावलिया प्रमुख ने, छट्ठो गारव दान ॥७८॥
कुशील नो अर्थी जिको, गणिकादिक ने जान।
दिये द्रव्य तेहने कह्युं, सप्तम अधर्म दान ॥७९॥

विविध रूप चित्र्या तिहां, नयना ने सुखदाय ।
नाटक ना भुङ्कार बहु, जन मन हुलसत थाय ॥६०॥
दानशाला दक्षिण बने, दिये दान दगचाल ।
जीमाये बणी मग रांक बहु, भोजन विविध रसाल ।६१।
तीगच्छ शाला पश्चिम बने, राख्या वैद्य सुतास ।
औषध करी रोगी भणी, करै अधिक आराम ॥६२॥
शुभ अलङ्कार उत्तर बने, नाई प्रमुख बैसाय ।
रोगी प्रमुख भणी तिहां, खिजमत स्नान कराय ॥६३॥
इम बहु असंयती भणी, सुख साता उपजाय ।
उपना छेहड़े 'सोल गद, नन्दन रै तनु मांय ॥६४॥
काल करी मींडक हुवो, निज पुष्करणी मांय ।
सावद्य कार्य ना कटुक फल, निमल विचारो न्याय ।६५।
ज्ञाताध्ययने आठमें, देखो चतुर सुमर्म ।
चोखी सन्यासण कह्युं, दान धर्म शुचि धर्म ॥६६॥
दान धर्म शुचि धर्म कर, निरविघ्न स्वर्ग जाय ।
मल्लि भणी चोखी कहो, ए निज श्रद्धा ताय ॥६७॥
तब मल्लि कह्यो चोखी भणी, रुधिरे खरड्या जेह ।
वस्त्र लोही सूं धोवियां, शुद्ध हुवै किम तेह ॥६८॥
तिम अष्टादश पाप प्रति, सेवै जे कोई जन्त ।
तेह निमल किण विध हुवै, दीधो एह दृष्टान्त ॥६९॥

वेश्या ने देवै तिको, प्रत्यच अधर्म पेख ।
दीसै लोक विषे तसु, अधर्म नाम सम्पेख ॥६०॥
धर्म दान बिन शेष अठ, ते मिण अधर्म जान ।
गुण निप्पन ए नाम तसु, भाष्या श्री भगवान ॥६१॥
श्री जिनवर जे दान री, आज्ञा नहीं दे कोय ।
धर्म पुण्य नहिं तेह में, हिये विमासी जोय ॥६२॥
दशमें ठाणे धर्म दश, पाषण्ड धर्म आख्यात ।
पिण ते नहिं आज्ञा विषे, तिमहिज दान अवदात ।६३।
सूत्र चारित्र के धर्म वे, श्री जिन आज्ञा मांहि ।
तिमहिज जिन आज्ञा विषे, धर्म दान कहिवाय ॥६४॥
जिन आज्ञा जे धर्म नी, ते निर्वद्य पहिचाण ।
आज्ञा नहिं जिण धर्म री, ते तो सावद्य जाण ॥६५॥
जिन आज्ञा जे दान नी, ते निर्वद्य अवलोय ।
आज्ञा नहिं जे दानरी, ते सावद्य छै सोय ॥६६॥
दशमें ठाणे स्थिवर दश, भाष्या श्री भगवान ।
सावद्य निर्वद्य ओलखो, जिन आज्ञा करि जाण ॥६७॥
तिमहिज जिन आज्ञा थकी, सावद्य निर्वद्य दान ।
ओलख ने निर्णय करे, ते कहिये बुद्धिवान ॥६८॥
नवमें ठाणे पुण्य बन्ध, नव विध समुच्चे ख्यात ।
अन्नपुण्य फुन पाणपुण्य, लेणपुण्य विख्यात ॥६९॥

धर्म दानवर आठमूं, तीन भेद है तास ।
सूत्र सुपात्र दान फुन, अभय दान गुण राश ॥८०॥
आगम अर्थ बताय ने, तसु मिथ्यात्व मिटाय ।
शुद्ध समकित पमाविये, सूत्र दान कहिवाय ॥८१॥
वर महाव्रत धारी मुनि, दिये सूजतो तास ।
दान सुपात्र तसु कह्यो, द्वितीय भेद सुविमास ॥८२॥
भय नहिं दे जंतू भणी, हणवारा पच्चखाण ।
ते अभय ए भेद त्रण, धर्म दान रा जाण ॥८३॥
सचितादिक जे द्रव्य बहु, दिये उधारा जेम ।
ध्यान पाछो लेवा तणो, नवम कहन्तो एम ॥८४॥
लेणायत ने जिम दिये, हांतो नेंता देय ।
दियां पछे पाछो लिये, दशम कहन्तो तेय ॥८५॥
धुर वोहरा जिम उभय ए, दियां प्रथम दे तेह ।
ते नवमूं फुन दशम जे, दियां पाछो दे जेह ॥८६॥
धर्म दान अष्टम तिको, श्री जिन आज्ञा मांहि ।
शेष दान नव छे जिका, जिन आज्ञा में नांहि ॥८७॥
असंजती ने दान दे, तसु कह्यो अघ एकन्त ।
नवही दान तेहने विषे, देखोजी बुद्धिवन्त ॥८८॥
ए दश दान कह्या तिके, गुण निष्पन्न तसु नाम ।
पिण जिन आज्ञा बाहिरो, ते सावद्य अघ धाम ॥८९॥

वलि सूझता उदक प्रति, पायां तसु पुण्य होय।
अथवा उदक असूझतो, पायां पुण्य अवलोय ॥११०॥
पात्र दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह।
मुनि प्रति दीधां पुण्य है, तथा असाधु प्रतेह ॥१११॥
चोर कसाई ने दियां, वलि गणिका प्रति जोय।
तुझ लेखे सहु ने दियां, पुण्य बन्ध अवलोय ॥११२॥
लयणपुण्य समुच्चय कह्यो, ते जागां नवी कराय।
छकाय हणी दे तासु पुण्य, के सीधी दीधां थाय ॥११३॥
पात्र ने दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह।
मुनि प्रते दीधां पुण्य है, तथा असाधु प्रतेह ॥११४॥
गणिका चोर कसाई प्रते, दीधां पुण्य बंधाय।
समुच्चय लयणपुण्या कह्यो, उत्तर देवो ताय ॥११५॥
सयणपुण्य समुच्चय कह्यो, रूंख कटाय कटाय।
पाट बाजोट कराय ने, दीधां पुण्य बंधाय ॥११६॥
के सीधा दीधां पुण्य है, पात्र कुपात्र अथीज।
साधु असाधु ने दियां, ते किण में पुण्य कहीज ॥११७॥
गणिका चोर कसाई प्रते, दीधां पुण्य अवलोय।
समुच्चय सयणपुण्ये कह्यो, उत्तर देवो सोय ॥११८॥
वस्त्रपुण्य समुच्चय कह्यो, कपड़ा नवा बनाय।
धोवाय दीधां पुण्य है, के सीधा दीधां ताय ॥११९॥

सयणपुण्य फुन वस्त्रपुण्य, मनपुण्य वचपुण्य काय ।
नमस्कारपुण्यो नवम, समुच्चे ही कहिवाय ॥१००॥
कोई कहै अन्नपुण्य इम, समुच्चय आख्यो स्वाम ।
ते माटे सहु ने दियां, पुण्य बन्ध, छै ताम ।१०१।
इम कहै तेहने पूछिये, अन्नपुण्य आख्यो सोय ।
के कोरो दीधां पुण्य हुवे, के काचो दीधां होय ॥१०२॥
के अन्नपुण्य रांध्यो दियां, सचित दियां पुण्य थाय ।
तथा अचित दीधां थकां, पुण्य बन्ध कहिवाय ॥१०३॥
दियां सूझतो पुण्य है, वा असूझतो दियेह ।
पात्र प्रति दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह ॥१०४॥
मुनि प्रति दीधां पुण्य है, तथा असाधू प्रतेह ।
चोर कसाई ने दियां, वलि गणिका प्रतेज देह ॥१०५॥
समुच्चय आख्यो अन्नपुण्य, ते माटे अवलोय ।
सहु ने दीधां पुण्य नो, तुझ लेखे बन्ध होय ॥१०६॥
इम तसकर गणिकादि जे, सहु ने दीधां पुण्य ।
तिणसुं सघला पात्र है, नहिं कुपात्र जघन्य ॥१०७॥
पाणपुण्य समुच्चय कह्यो, ते अचित्त पायां पुण्य होय ।
के सचित्त उदक पायां थकां, पुण्य बंध तसु जोय १०८
जो सचित्त पायां थी पुण्य हुवे, तो छाणयो पावेह ।
अथवा अछाणया उदक प्रति, पायां पुण्य कहेह ॥१०९॥

नमस्कार समुच्चय काह्यो, सिद्ध साधु प्रति जोय।
नमस्कार कियां पुण्य छै, के अन्य प्रति कीधां होय ॥१३०॥
कुत्ता भाई राम राम, कागा भाई राम।
डूम चाण्डाल भणी नम्यां, पुण्य छै के नहिं ताम ॥१३१॥
विनय करै सघला तणो, विनयवादी अवलोय।
तसु पाषण्डी प्रभू काह्यो, सूत्रे ए वच जोय ॥१३२॥
जो नमस्कार सहु ने कियां, पुण्य कहै मति मन्द।
ते कीड़ायत जाणवा, विनय वादी रा अन्ध ॥१३३॥
अन्नपुण्य समुच्चय काह्यो, ते माटे अवलोय।
सहु ने अन्न दीधां थकां, पुण्य कहै जे कोय ॥१३४॥
तसु लेखे समुच्चय काह्या, मनपुण्य तणो बन्ध थाय।
ए पिण अशुद्ध तीनों थकी, पुण्य तणो बन्ध थाय ॥१३५॥
जो सावद्य मन वच काय थी, पुण्य बंध नहिं थाय।
अन्न पिण दियां कुपात्र ने, पुण्य बंधे किण न्याय ॥१३६॥
नमस्कार पुन्ये अपि, समुच्चय कहिये पेख।
सहु ने नमण कियां थकां, पुण्य बन्ध तसु लेख ॥१३७॥
गणिका चोर कसाई प्रति, कर जोड़ी नमस्कार।
कीधां पिण पुण्य बन्ध हुवे, जसु लेखे अवधार ॥१३८॥
सर्व भणी जो अन्न दियां, वलि सहु ने नमस्कार।
कीधां पुण्य तो देखलो, समम अङ्ग मंझार ॥१३९॥

पात्रेज दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह।
साधु असाधु ने दियां, किण में पुण्य कहेह ॥१२०॥
गणिका चोर कसाई प्रते; दीधां पुण्य बंधाय।
समुच्चय वत्थपुण्य कह्यो, उत्तर देवो न्याय ॥१२१॥
मनपुण्ये समुच्चय कह्यो, सावद्य अशुद्ध जघन्य।
मन प्रवर्त्तायां पुण्य छै, के निर्वद्य मन थी पुण्य ॥१२२॥
पञ्च आस्रव सेवण तणा, मन थी पुण्य बंधाय।
पञ्च आस्रव छोडण तणा, मन थी पुण्य बंध थाय ॥१२३॥
समुच्चय मनपुण्ये कह्यो, सावद्य मन प्रवर्त्ताय।
ते थी पुण्य बंधे के नहिं, उत्तर देवो ताय ॥१२४॥
वचपुण्ये समुच्चय कह्यो, सावद्य अशुद्ध जघन्य।
सच बोल्यांथी पुण्य छै, के निर्वद्य वच थी पुण्य ॥१२५॥
समुच्चय वचपुण्ये कह्यो, मुख से बोले गाल।
एक गणे नवकार शुद्ध, किण थी पुण्य बन्ध न्हाल ॥१२६॥
काय पुण्य समुच्चय कह्यो, सावद्य तन प्रवर्त्ताय।
तेह थकी पुण्य बन्ध हुवे, के निर्वद्य तनु थी थाय ॥१२७॥
शीत तप्त तनु थी खमे, ते थी पुण्य बंधाय।
गेहूं पीसे छेदे हरी, तेथी पुण्य बन्ध थाय ॥१२८॥
हिन्सा झूठ अदत्त पुन, चौथो आस्रव ताहि।
समुच्चय काय पुण्ये कह्यो, इण थी पुण्य के नाहिं ॥१२९॥

जागां पाट बाजोटादि नो, पडे साधु रे काम ।
कपड़ो पिण साधू तणो, अवश्य चाहिये ताम ॥१५०॥
इम कल्पे साधू भणी आख्या तेहिज बोल ।
देखोजी देखो तुम्हें, आंख हीया री खोल ॥१५१॥
साधू बिन जो अन्य प्रति, दीधां पुण्य जो होय ।
तो गाय पुण्य किम नवि कह्यो, भैंस पुण्य पिण जोय ॥१५२॥
सुवरण पुण्य रूपो पुण्य, हीरो पुण्य उदार ।
मोती ने माणिक पुण्य, खेती पुण्य विचार ॥१५३॥
इत्यादिक मुनिवर भणी, नहिं कल्पे ते बोल ।
सूत्र विषे ते नवि कह्या, देखोजी दिल खोल ॥१५४॥
मुनि प्रति नहिं कल्पे तिको, एक ही बोल कहन्त ।
तो तुम्हे कहता अन्य प्रति, दीधे पिण पुण्य हुन्त ॥१५५॥
जब को कहे कह्यो अर्थ में, पात्र अन्न दीधेह ।
तीर्थङ्कर नामादि जे, पुण्य प्रकृति बंधेह ॥१५६॥
पात्र थकी जो अन्य प्रति, दियां अनेरी ताहि ।
पुण्य प्रकृति बन्धे इसो, कह्यो अर्थ रे माहिं ॥१५७॥
तसु कहिजे जे पात्र ने, दीधे छतां जु तेह ।
तीर्थङ्कर नामादि जे, पुण्य प्रकृति बंधेह ॥१५८॥
आदि शब्द में तो जिके, पुण्य प्रकृति सहु आय ।
इक ही बाकी नवि रहि, निर्मल विचारो न्याय ॥१५९॥

अन्य तीर्थी ने नहिं करूं, वन्दना ने नमस्कार।
अशणादिक पिण द्युं नहीं, आनन्द कह्युं उदार ॥१४०॥
मुनि विन अन्य प्रति अन्न दियां, वलि कियां नमस्कार।
पुण्य हुवे तो किम लियो, आनन्द अभिग्रह सार ॥१४१॥
जसु अन्न दीधां पुण्य हुवे, तेह ने पिण शिरनाम।
नमस्कार कीधां छतां, पुण्य हुवे छे ताम ॥१४२॥
ते नव ही निर्वद्य छे, साधू ने नमस्कार।
कीधां पुण्य छे तो तसु, अन्न दीधां पुण्य सार ॥१४३॥
जल पिण निरदोषण तसु, दीधां पुण्य सु देख।
जागां पिण तसु सूझती, आप्यां पुण्य सु पेख ॥१४४॥
सयण पाट प्रमुख तसु, दीधां पुण्य सो जोय।
वस्त्र पिण निरदोषण तसु, दीधां थी पुण्य होय ॥१४५॥
मन वच काया पिण वलि, निरवद्य थी पुण्य बन्ध।
नमस्कार पद पञ्च प्रति, कीधां पुण्य सु सन्ध ॥१४६॥
निरवद्य रै लेखे नवूं, बोल सरीषा शुद्ध।
नवूं सरीषा नवि कहै, श्रद्धा तास विरुद्ध ॥१४७॥
साधू ने कल्पे जिके, तेहिज द्रव्य आख्यात।
द्रव्य अनेरा नवि कह्या, देखो तज पखपात ॥१४८॥
अन्न साधु रै जोइये, जल पिण मुनि रै ताय।
चाहिजे तिण कारणे, पाणपुण्य कहिवाय ॥१४९॥

इत्ति मानै तसु लेख पिण, पुण्य पात्र ज दियेह।
अर्थ न मानै एह तिण, इत्ति न मानी तेह ॥१७०॥
सूत्र भगवती सुयगडांग, उत्तराध्ययन उजास।
असंजती प्रति दान दे, कह्या अशुभ फल तास ॥१७१॥
इम जाणी उत्तमा नरां, राखो सूत्र प्रतीत।
श्रीजिन आण उथाप ने, मती को करो अनीत ॥१७२॥
ठाणा अङ्ग ठाणे तूर्य वर, तूर्य उद्देशा मांय।
च्यार मेह प्रभू आखिया, सांभलज्यो चित्तल्याय ॥१७३॥
इक वर्षे जे खेत्र में, अखेत वर्षे नांहि।
अखेत वर्षे एक पिण, खेत्र न वर्षे ताहि ॥१७४॥
इक खेत्रे पिण वर्षतो, अखेते पिण वर्षाय।
इक खेत्रे नहिं वर्षतो, अखेत वर्षेह नांहि ॥१७५॥
इण दृष्टान्ते पुरुष नी, च्यार जाति कहिवाय।
देवै पात्र विषे जु इक, दिये कुपात्रे नांहि ॥१७६॥
इह विध कह्या कुपात्र ने, कुखेत्र सु वर न्याय।
वायो जिहां उगे नहीं, ते कुखेत्र सु वर न्याय ॥१७७॥
ते माटे जु कुपात्र ने, दीधां शुभ अङ्कुर।
उगे नहिं तिण कारणे, कह्या कुखेत्र भूर ॥१७८॥

॥ इति दानाधिकार ॥

ऋषभादिक कहिवे इहां, जिन चौवीस सु आय।
गौतमादिक गणवे करी, चउद सहस्र मुनिराय ॥१६०॥
तिम तीर्थङ्कर नामादि इम, आदि शब्द रे मांहि।
पुण्य प्रकृति आवी सहु, बाकी रही न कांय ॥१६१॥
पात्र थकी जो अन्य प्रति, दियां अनेरी जाण।
पुण्य प्रकृति बंधे तिको, अर्थ विरुद्ध पहिचाण ॥१६२॥
आदि शब्द में तो जिके, पुण्य प्रकृति सहु आय।
बलि अनेरी पुण्य नी, प्रकृति किसी कहिवाय ॥१६३॥
किणहिक ठाणा अङ्ग मे, छै ए अर्थ जबून्य।
सहु ठाणा अङ्ग में नहीं, पाठ बिना अर्थ शून्य ॥१६४॥
अन्य प्रति दीधां अन्न जे, पुण्य प्रकृति बंधेह।
वृत्ती विषे ए नवि कह्यो, अभयदेव सूरेह ॥१६५॥
पात्रे अन्न देवा थको, जे तीर्थङ्कर नामादि।
पुण्य प्रकृति नो बंध ते, अन्नपुण्य संवाद ॥१६६॥
वृत्ती विषे इतरोज छै, पिण अन्य प्रति दीधां सोय।
बंधे अनेरी पुण्य प्रकृति, एहवुं कह्यो न कोय ॥१६७॥
पाठ विषे पिण ए नहीं, वृत्ती विषे पिण नांहि।
सूत्र थकी पिण नहिं मिले, ए विरुद्ध अर्थ इणन्याय ॥१६८॥
अन्नपुण्य को अर्थ शुद्ध, वृत्ति विषे कह्युं सोय।
पात्रे दीधां पुण्य कह्युं, प्रत्यक्ष ही अवलोय ॥१६९॥

ग्रहस्थ ने देवो तज्यो, स्यूं जाणो मुनिराय ।
ते संसार भ्रमण तणो, हेतु जाणो ताय ॥ ९ ॥
सुयगडांग नवमें कह्यो, गाहा तेवीसम् ताहि ।
तिण सूं श्रावक आवियो, प्रत्यक्ष ग्रहस्थ मांहि ॥१०॥
पनरमोद्देश निशीथ में, मुनि अन्य तीर्थी प्रतेह ।
अथवा ग्रहस्थ प्रते वली, अशणादिक आपेह ॥११॥
वस्त्र पात्र फुन कम्बली, रजोहरण सुविचार ।
ए आठ बोल देवे तसु, दण्ड चौमासो धार ॥१२॥
देतां प्रति अनुमोदियां, दण्ड चौमासो आय ।
ते माटे ग्रहस्थ विषे, श्रावक पिण इहां आय ॥१३॥
तसु मुनि पोते दे नहीं, वलि जसु देवे कोय ।
अनुमोदे नहि तेहने, कल्पि आचार सु जोय ॥१४॥
तृतीय करण अनुमोदियां, दण्ड चौमासो आय ।
तो प्रथम करण देवे तसु, धर्म पुण्य किम थाय ॥१५॥
पड़िमाधारी पिण इहां, आयो ग्रहस्थ विषेह ।
तसु अशनादिक नहि दिये, महा मुनि गुण गेह ॥१६॥
ते पड़िमाधारी प्रते, ग्रहस्थ दिये जो आहार ।
तो मुनि अनुमोदे नहीं, देखो न्याय विचार ॥१७॥
देता प्रति अनुमोदियां, मुनिवर ने दण्ड थाय ।
तो देणवाला ने धर्म किम, तसु खाणो अव्रत मांहि ॥१८॥

॥ अथ बावीसमूं श्रावक ने दियां स्यूं थाय अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै श्रावक भणी, असणादिक आपेह ।
तेहने स्यूं फल संपजे, हिव तसु उत्तर लेह ॥ १ ॥
द्वितीय सुयगडांगे कह्यो, द्वितीय अध्ययन विशेह ।
अथवा प्रथम उपाङ्ग में, प्रश्न बीसमें लेह ॥ २ ॥
खाणो ने पुन पीवणो, श्रावक तणो सु जोय ।
अव्रत मांहि आखियो, वलि गहणो अवलोय ॥ ३ ॥
त्याग त्याग सहु व्रत है, राख्यो जे आगार ।
तेहने अव्रत आखियै, बारू न्याय विचार ॥ ४ ॥
दूजो आस्रव दाखियो, अव्रत ने जिनराय ।
ठाणांगठाणे पांचमें, वलि समवायाङ्ग मांहि ॥ ५ ॥
भाव शस्त्र अव्रत भणी, भाख्यो श्री जगभाण ।
शङ्का हुवै तो देखल्यो, ठाणांग दशमें ठाण ॥ ६ ॥
तिण सूं हिये विचारिये, श्रावक ने अवलोय ।
अव्रत सेवायां छतां, धर्म पुण्य किम होय ॥ ७ ॥
श्रावक ते विरते करी, देव वैमानिक थाय ।
कह्युं भगवती प्रथम शत, अष्टमोद्देशक मांहि ॥ ८ ॥

व्यावच ग्रहस्थ तणी कही, दशवैकालिक मांहि ।
अणाचार अट्ठबीसमो, तृतीय अध्ययने ताहि ॥२९॥
गृही व्यावच मुनि नहीं करै, नथी करावे जाण ।
करतां अनुमोदे नहीं, त्रिविध २ पच्चखाण ॥३०॥
ग्रहस्थ प्रति पूछै मुनि, सुख साता छे तोय ।
अणाचार ते सोलमों, दशवैकालिक जोय ॥३१॥
सुख पूछ्यां बञ्छी तिणे, साता तसु अणाचार ।
तो गृही ने साता कियां, किम हुवे धर्म उदार ॥३२॥
दशाश्रुतस्कंधे ग्यारमी, पडिमा में सम्पेख ।
पेज्ज बंधण तूटो नहीं, न्यात तणी सुविशेष ॥३३॥
ते माटै कल्पे तसु, न्यात तणो जे आहार ।
इम पेज्ज बंधण खाते कही, भिक्षाचरी तसु धार ॥३४॥
पेज्ज बन्धण ना अशुभ फल, ते माटे अवलोय ।
तसु खाते भिक्षाचरी, ते पिण सावद्य जोय ॥३५॥
भगवती अष्टम शत विषे, पञ्चमुद्देशक जान ।
गौतम पूछ्यो गृही करी, सामायिक मुनि स्थान ॥३६॥
तसु भण्ड तस्कर अपहर्यां, सामायक चौतार ।
भण्ड नी करै गवेषणा, श्रावक तेह तिंवार ॥३७॥
हे प्रभु ! ते निज भण्ड तणी, करै गवेषणा सोय ।
कै पर भंड नी ते करै, गवेषणा अवलोय ॥३८॥

गौतम प्रति सथार मे, आनन्द आख्यो एम ।
हे भदन्त ! हूं ग्रहस्थ छूं, ग्रहि मज्झ वसूं ज तेम ॥१९॥
ते ग्रही मज्झ बसता भणी, इतरो अवधि उपन्न ।
पूर्व दिशि लवणो दधी, जोयण पञ्च सयजन्न ॥२०॥
देखूं ते हूं खेत प्रति, दक्षिण पश्चिम एम ।
वलि उत्तर दिशि ने विषे, चूल हिमवन्त तेम ॥२१॥
ऊंचो सौधर्म कल्प लग, अधो नरक धुर ताम ।
सहस्र चोरासी वर्ष स्थिति, लोलुच नरकावास ॥२२॥
गौतम बोल्या ए वडो, मोटो अवधि उदार ।
ग्रहस्थ भणी नहीं ऊपजे, हे आनन्द विचार ॥२३॥
ते माटे तूं एहनो, ले आलोवण सार ।
जाव प्रायश्चित एहनो, पडिवजिये वर प्यार ॥२४॥
तब आनन्द पूछो भदन्त, जी वर सत्य वदेह ।
आवे छे दण्ड तेह ने, श्री जिन वयण- विषेह ॥२५॥
गौतम कहे नहिं दण्ड तसु, वलि आनन्द कहे वाय ।
सत्य प्रवर वच कहे तसु, प्रायश्चित जो नाय ॥२६॥
तो तुम्ह हिज आलोवणा, जाव प्रायश्चित लेह ।
इत्यादिक इधकार छे, देखोजी चित्त देह ॥२७॥
इम सप्तम अङ्ग कह्यो, अणशण से सुविशेष ।
आनन्द आख्युं ग्रहस्थ हूं, तो पडिमा नो स्यूं पेख ॥२८॥

ममत्व तजो नहीं ते भणी, धन तेहनो ज कहाय ।
तिण सुं सामायक मझै, मुनि प्रति द्रव्य वहिराय ।४९।
द्रव्य अनेरा नो हुवे, ते मुनि प्रति जो देह ।
तो तेहनी आज्ञा थकी, वहिरावे गुन गेह ।।५०।।
पिण ममत्व भाव पच्चख्यो नहीं, तिण सुं तसु द्रव्य जोय ।
वहिरायां आज्ञा तणो, कारण नहि छै कोय ।।५१।।
तिण ज उद्देशे पूछियो, गृही सामायक मांहि ।
कोई पुरुष सेवे तदा, तसु भार्या प्रति आय ।।५२।।
हे प्रभु ते श्रावक तणी, भार्या प्रति सेवेह ।
तथा अभार्या प्रति तदा, सेवे इम पूछेह ।।५३।।
जिन कहे ते श्रावक तणी, भार्या प्रति सेवन्त ।
अभार्या प्रति सेवे नहीं, वलि गौतम पूछन्त ।।५४।।
हे प्रभु सामायक विषे, भार्या अभार्या होय ।
जिन कहे हन्ता गोयमा, भार्या अभार्या जोय ।।५५।।
किण अर्थे प्रभु इम कह्युं, भार्या प्रति सेवन्त ।
अभार्या प्रति सेवे नहीं, तब भाषे भगवन्त ।।५६।।
जिन कहे सामायक विषे, इसो भावना भाय ।
माता नहिं छै मांहरी, पिता न म्हांरो ताहि ।।५७।।
भ्राता ते म्हांरो नहीं, भगिनी मांहरी नांहि ।
भार्या मांहरी को नहीं, सुत म्हांरो नहिं ताहि ।।५८।।

प्रभु कहे करे गवेषणा, निज भंड तणोज तेह।
पिण जे पर ना धन तणो, गवेषणा न करेह ॥३९॥
वलि गौतम पूछ्यां प्रभु, सामायिक रै मांहि।
ते भंड ने वोसिराविया, भंड अभंड कहाहि ॥४०॥
जिन कहे हन्ता गोयमा, भंड अभंड कहाय।
वलि गौतम पूछ्यो प्रभु, तसु भण्ड कह्यो किणन्याय ॥४१॥
प्रभु कहे सामायक विषे, ते इसी भावना भाय।
हिरण्य नहीं ए मांहरो, वलि मुझ सुवर्ण नाहिं ॥४२॥
कांसी नहीं ए मांहरो, नहीं वस्त्र मुझ एह।
नहिं मांहरो विस्तीर्ण धन, कनक रत्न मणि जेह ॥४३॥
मोती ने वलि शंख शिल, प्रवाल मूंग कहाय।
पद्म रत्न आदिक छतां, सार द्रव्य मुझ नांय ॥४४॥
एहवी चिन्तवना प्रवर, सामायक में जान।
पिण ममत्व भाव जे धन थकी, न कियो तिण पच्चखाण॥४५
तिण अर्थे इम आखियो, निज भंड तणोज जेह।
गवेषणा पिण पर तणा, भंड नी नथी करेह ॥४६॥
प्रगट पाठ में इम कह्यो, ते माटे अवलोय।
सामायक में धन थकी, ममत्व भाव तसु जोय ॥४७॥
ममत्व भाव पच्चख्यो नथी, गृही सामायक मांहि।
तो पड़िमा में धन तणो, ममत्व तजो किम ताहि ॥४८॥

शस्त्र ज षट्काय नो, अधिकरण कहिवाय ।
तसु तीखो कीधां छतां, धर्म पुण्य किम थाय ॥६९॥
इमहिज पड़िमा ने विषे, श्रावक आतम जाण ।
अधिकरण न्याये करी, वारू करो पिछाण ॥७०॥
सामायक में आतमा, तसु अधिकरण आख्यात ।
तो जे सामायक बिना, तेह तणी सी बात ॥७१॥
षट् पोसा इक मास में, अष्ट पोहरिया करेह ।
बया बोहित्तर वर्ष में, संवत्सरि इक लेह ॥७२॥
एह तिहोत्तर दिन तणो, व्याज तसु घर आय ।
वलि तोटादि नफा तणो, तेहिज धणी कहाय ॥७३॥
घर पुत्रादिक जन्मियां, हर्ष हिये तसु आय ।
चित्त उदास हुवे मूंआ, पेज्ज बंधन इम थाय ॥७४॥
तोटो सुण विलखो हुवे, नफो सुणी विकसाय ।
सामायक पोषह मज्झे, ममत्व भाव इण न्याय ॥७५॥
इमहिज पड़िमा रे विषे, हर्ष सोग चित्त आय ।
पेज्ज बंधन आख्यो प्रभु, न्यातीला सूं ताय ॥७६॥
एक लखपती सेठ जसु, मात पिता परिवार ।
स्त्री पुत्रादिक को नहीं, एकलड़ो अवधार ॥७७॥
लाख रुपइया रोकड़ा, मित्र भणी ज भलाय ।
श्रावक नी पडिमा वहे, एकादश लग ताहि ॥ ७८॥

नहिं छै म्हांरो पुत्रिका, सुत नो बहु विसास ।
ते पिण मांहरो को नहीं, करै इम चिन्तवणा तास ॥५६॥
प्रेम रूप बन्धन वलि, तसु विछिन्न न हुन्त ।
तिण अर्थे करि तेहनो, भार्या प्रति सेवन्त ॥६०॥
इह विध प्रभु जी भाखियो, सामायक रै मांहि ।
प्रेम बन्धन छेद्यो नथी, मात प्रमुख नूं ताहि ॥६१॥
इमहिज पड़िमा ने विषे. मात प्रमुख नूं सोय ।
प्रेम बंधन तूटो नथी, न्याय विचारो जोय ॥६२॥
इग्यारमी पड़िमा मझे, न्यातीला नी धार ।
प्रेम बधन तूटो नथी, तिण सुं ले तसु आहार ॥६३॥
कह्युं दशाश्रुतस्कन्ध इम, ते माटै अवलोय ।
पेज्ज बंधन खाते तसु, आहार लेवूं पिण होय ॥६४॥
पूछ्यां जिन आज्ञा न दे, लेण वाला ने जोय ।
देण वाला ने पिण नहीं, जिन आज्ञा अवलोय ॥६५॥
जिन आज्ञा बारे नहीं, धर्म पुण्य री अंश ।
धर्म कहै आज्ञा बिना, तसु कहिये मति भ्रंश ॥६६॥
सूत्र भगवती ने विषे, सप्तम सतकै भेव ।
प्रथम उद्देशा ने विषे, दाख्यो श्री जिनदेव ॥६७॥
सामायक मांहे कह्यो, श्रावक नो संपेख ।
आत्म ते अधिकरण इम, प्रगट पाठ में लेख ॥६८॥

पड़िमा में पिण पच्चखू, देश व्रत गुणठाण ।
जे जे तसु आगार छे, ते ते अव्रत जाण ॥८९॥
खाणो पीणो तेहनो, अविरत मांही जोय ।
तसु अव्रत सेवावियां, धर्म पुण्य किम होय ॥९०॥
पड़िमाधारी आहार ले, तेहने तो कहे पाप ।
तो देवे तसु धर्म किम, देखो थिर चित्त थाप ॥९१॥
जो लेण वाला ने पाप है, पाप लगायो जास ।
धर्म पुण्य किण विध हुवे, जोवो हिये विमास ॥९२॥
लेण वाला ने जे हुवे, देण वाला ने तेह ।
जिन आज्ञा नहिं विहु भणी, विहु ने अघ बंधेह ॥९३॥
जे पड़िमाधारी बिना, अन्य तणो पिण देख ।
खाणो पीणो पहिरणो, अविरत में सम्पेख ॥९४॥
ते माटे मुनि दे न तसु, दीधां आवे दण्ड ।
अनुमोद्यां पिण दण्ड है, सूत्र निशीथ सुमंड ॥९५॥
श्रावक जिमावण तणी, जिन आज्ञा दे नांहि ।
आज्ञा बिन नहि धर्म पुण्य, देखोजो दिल मांहि ॥९६॥
समदृष्टि श्रधे समो, जिन आज्ञा में धर्म ।
आज्ञा बारे धर्म नहीं, ए जिन शासन मर्म ॥९७॥
कहि कहि रे कितरो कहूं, धर्म न आज्ञा बार ।
आज्ञा मांहीं पाप नहीं, श्रध्यां सम्यकत्व सार ॥९८॥

मित्र तणो व्रत पञ्चमे, निज पोता ना जाण।
सहस्र दाम उपरन्त सूं, राखण रा पचखाण ॥॥७६॥
पड़िमाधारी ना जिके, लाख दाम राखन्त।
तेह तणो अव्रत तणो, अघ किण ने लागन्त ॥८०॥
तथा रुपइया लाख जे, किण रा परिग्रह मांहि।
पोते रखवाली करै, पिण तसु परिग्रह नांहि ॥८१॥
पड़िमाधारी ना प्रगट, परिग्रह मांहि पिछाण।
अविरत नो लागै तसु, पाप निरन्तर जाण ॥८२॥
ममत्व भाव पचख्यो नथी, पड़िमा में दृष्यन्याय।
सामायक जिम तेहनुं, तनु अधिकरण कहाय ॥८३॥
तथा लखपती सेठ इक, पुत्रादिक नहिं कोय।
गुमास्ता बहु तेहनै, विणज करै अवलोय ॥८४॥
दुकान बाणोत्तर भणी, सेठ भलावी सोय।
श्रावक नी पड़िमा वहै, एकादश लग जोय ॥८५॥
व्याज आवै रुपइया तणो, ते किण रा घर मांहि।
वलि तोटारु नफा तणो, कंवण धणी कहिवाय ॥८६॥
पड़िमाधारी ना प्रगट, घर में आवै व्याज।
नफा अनै तोटा तणो, एहिज धणी समाज ॥८७॥
लाख तणा बे लाख थया, परिग्रह इण रो होज।
सहस्र पचास रह्या छतां, तोटो तास कहीज ॥८८॥

सावद्य पाप सहित जे, सावद्य कहिये तास।
अन्तर आंख उघाड़ ने, वारूं न्याय विमास ॥ ८ ॥
निशीथ उद्देशे बारमें, मुनि अनुकम्पा आण।
तृणादिके पाशे करी, जो बांधे त्रस प्राण ॥ ९ ॥
अथवा बांधतां प्रते, जो अनुमोदे ताय।
चौमासो तसु प्रायश्चित, प्रगट पाठ में वाय ॥१०॥
इमहिज बन्ध्या जीव ने, छोडे तो दण्ड पाय।
छोड़ता प्रति जे वली, अनुमोद्यां दण्ड आय ॥११॥
ए प्रत्यक्ष पाठ विषे कह्यो, अनुकम्पा ए जान।
सावद्य छे तिण कारणे, दण्ड कह्यो भगवान ॥१२॥
छोडे तसु अनुमोदियां, तृतीय करण दंड ख्यात।
तो छोडे ते धुर करण, तास धर्म किम थात ॥१३॥
असंयती रो जीवणो, वञ्छे नहिं मुनिराय।
मरणो पिण नहिं वञ्छणो, ए राग द्वेष कहिवाय ॥१४॥
असंयती रो जीवणो, वञ्छ्यां धर्म जु होय।
तो ए अनुकम्पा तणो, प्रायश्चित किम जोय ॥१५॥
सावद्य ए अनुकम्पा छे, तिण सुं दण्ड छे तास।
निर्वद्य नो दंड हुवे नहीं, जोवो हिये विमास ॥१६॥
अनुकम्पा ने अर्थ ही, कृष्णे ईंट उपाड़।
मूंकी वृद्ध तणे घरे, अन्तगडे अधिकार ॥१७॥

इस सांभल उत्तम नरां, राखो जिन सु प्रतीत ।
आज्ञा बारे धर्म कही, करवो नहीं अनीत ॥६६॥
॥ इति श्रावक ने दियाँ स्यूं थाय अधिकार ॥

॥ अथ तेबीसमूं अनुकम्पा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै असंजती भणी, जीव बचावे जाय ।
स्युं फल तास समुपजे, तसु उत्तर पडिछाय ॥ १ ॥
जीव छोडावे दाम दे, जिन मुनि नहिं दे आण ।
अनुमोदे पिण नहिं तिके, सावद्य रा पच्चखाण ॥ २ ॥
मुनि दीक्षा लीधी तदा, सर्व सावद्य पच्चखेय ।
जीव छोडावे नहिं तिको, निज वस्त्रादिक देय ॥ ३ ॥
ग्रहस्थ छोडावे दाम दे, जो मुनि अनुमोदेह ।
तृतीय करण भागे तसु, पाप कर्म बंधेह ॥ ४ ॥
तृतीय करण अनुमोदवे, लागे पाप जबून ।
तो दाम दिये ते धुर करण, कीम हुवे तसु पुण्य ॥ ५ ॥
सामायक पोषह विषे, सावद्य प्रति पच्चखेह ।
जीव छोडावे नहिं तिके, निज वस्त्रादिक देह ॥ ६ ॥
खोटो सावद्य जाण के, जे त्यागो मुनिराय ।
ग्रहस्थ ते सावद्य कियां, धर्म पुण्य किम थाय ॥ ७ ॥

छेद्र करी जल आवतो, देखी ग्रहस्थ प्रतेह।
बतावणो नहिं जिन कह्यो, प्रत्यक्ष पाठ विषेह ॥२८॥
उदक भरातो नाव ए, देखूं तुरत बताय।
एहवुं पिण नवि चिन्तवे, मन माहीं मुनिराय ॥२९॥
आप अने बहु अन्य जन, डूबे उदक करेह।
सम भावे बेठो रहे, राग द्वेष टालेह ॥३०॥
द्वितीय अङ्ग में आखियो, श्रुतखंध द्वितीय विषेह।
पञ्चम अध्ययने प्रगट, तीसमी गाथा जेह ॥३१॥
जीव सिंह व्याघ्रादि फुन, हिन्सक देखी सन्त।
यह मारवा जोग छै, इम न कहे गुणवन्त ॥३२॥
अथवा हिन्सक देख ने, यह हणवा जोग ज नाहिं।
एहवुं पिण कहिवुं नहीं, निपुण विचारो न्याय ॥३३॥
वृत्तिकार एहवुं कह्यु, वधवा जोग ज नाहिं।
इम कहतां तसु कर्मां नी, अनुमोदना जु थाय ॥३४॥
कह्या सिंह व्याघ्रादि जे, आदि शब्द रे मांहि।
घातक जे षटकाय ना, ते सहु आव्या ताहि ॥३५॥
हणे कसाई अज भणी, तसु तारण अणगार।
त्याग करावे वध तणा, दे उपदेश उदार ॥३६॥
पिण बकरा नुं जीवणो, वंछै नहिं मन मांहि।
असंयम जीवत वंछणो, वर्ज्यो छे जिनराय ॥३७॥

राणी धारणी गर्भ नी, अनुकम्पा ने अर्थ।
पथ्य- अनादिक भोगव्या, ज्ञाता मांहि तदर्थ ॥१८॥
सुलसां नी अनुकम्प करि, देवकी ना सुत आणि।
संक्या हरण गवेषी सुर, अन्तगड में जाण ॥१९॥
अभय कुमार तणी वली, अनुकम्पा चित्त आणि।
दोहलो पूर्यो मित्र सुर, ज्ञाता में जिन वाणि ॥२०॥
रत्न द्वीप देवी तणी, जिन ऋषि करुणा कीध।
ज्ञाता नवम अध्येन कह्यूं, सावद्य यह प्रसिद्ध ॥२१॥
इत्यादिक अनुकम्प नी, जिन आज्ञा दे नाहिं।
ते माटे सावद्य तिके, देखोजी दिल मांहिं ॥२२॥
जीव हणे मुज कारणे, चिन्तव नेम कुमार।
तोरण थी पाछा फिर्या, ए अनुकम्पा सार ॥२३॥
जीव हणंता नेम ना, विवाह निमित्त पिछाण।
ते टाल्यो पाप पोता तणो, जिन आज्ञा तिहां जाण ॥२४॥
गज भव सुसलो नवि हण्यो, कष्ट भोगव्यो आप।
निर्वद्य ए अनुम्प छै, गज टाल्यो निज पाप ॥२५॥
उत्तराध्ययन इकवीस में, चोर देख समुद्रपाल।
छोड़ायो आख्युं नथी, चरण लियो सुविशाल ॥२६॥
दूजो श्रुतस्कन्ध आक्क धुर, तृतीय अध्ययन विचार।
प्रथम उद्देश कह्यो मुनि, बेठो नाव मझार ॥२७॥

मात बचावा ऊठियो, भागो पोषह ताहि ।
तो साधु बचावे तेहनुं, चारित्र भागै किम नांहिं ॥४८॥
जे कार्य्यं कीधे छतै, पोषह चारित्र भागेह ।
ते कार्य्यं में धर्म किम, न्याय विचारी लेह ॥४९॥
द्वितीय सुयगडाङ्ग पवर, छट्ठा अध्ययन रे मांहि ।
अठारमी गाथा अमल, आर्द्र मुनि कहिवाय ॥५०॥
निज कर्म प्रते खपायवा, वा अन्य तारण ताहि ।
धर्म देशना प्रभु दियै, निमल विचारो न्याय ॥५१॥
असंजती जे जीव छै, तास बचावा हेत ।
वीर प्रभू उपदेश दे, इम नवि आख्यो तेथ ॥५२॥
द्वितीय आचारङ्ग ने विषे, द्वितीय अध्ययने ताहि ।
प्रथम उद्देशे प्रभु किह्यो, ग्रहस्थ लड़ै माहोमांहि ॥५३॥
देखी नवो चिन्ते मुनि, मारो एह प्रतेह ।
अथवा इण ने मत हणो, राग द्वेष वर्जेह ॥५४॥
द्वीतीय आचारङ्ग ने विषे, द्वितीय अध्ययन विषेह ।
प्रथम उद्देशे ग्रहस्थ वे, तेऊ आंरम्भ करेह ॥५५॥
देखी मन चिन्तै न मुनि, अग्नि उजालो एह ।
अथवा अग्नि उजाल मति, इम पिण नवि चिन्तेह ॥५६॥
तथा बुझावो अग्नि ए, अथवा मत बुझाव ।
एहवुं पिण नवि चिन्तवे, राखै मुनि सम भाव ॥५७॥

दशमें अध्ययन द्वितीय अङ्ग, च्यार बीसमी गाह ।
जीवित मरण न वंछणो, असंयम जीवित ताह ॥३८॥
तेरमे अध्ययने द्वितीय अङ्ग, तीन-बीसमी गाह ।
जीवण मरण न बंछणो, असंयम जीवित ताह ॥३९॥
पनरम अध्ययने द्वितीय अङ्ग, दशमी गाथा मांहि ।
असंयम जीवित प्रते, मुनि आदर दिये न ताहि ॥४०॥
तृतीय अध्ययने द्वितीय अङ्ग, तूर्य उद्देश विषेह ।
जीवित मरण न बंछणो, असंयम जीवित तेह ॥४१॥
इत्यादिक बहु स्थान के, असंयम जीवत ताय ।
बाल मरण नहिं बञ्छणो, भाख्यो श्री जिनराय ॥४२॥
आप तणो नहिं बञ्छणो, असंयम जीवित सोय ।
तो पर नूं बञ्छ्या थकां, धर्म पुण्य किम होय ॥४३॥
बाल मरण पिण आपरो, बंछे नहिं मुनिराय ।
पर नूं पिण बंछे नहीं, बञ्छ्या धर्म न थाय ॥४४॥
पण्डित मरण न आप रो, बञ्छे महा मुनिराय ।
पर नूं पिण बञ्छे तिको, विमल विचारो न्याय ॥४५॥
कह्यो सातमा अङ्ग में, पोषह विषे पिछाण ।
मात बचावण ऊठियो, चूलणीपिया जाण ॥४६॥
अभा तसु इम आखियो, भागो पोषह सोय ।
वलि व्रत भागो कह्यो, भागो नियम सु जोय ॥४७॥

निशीथ उद्देशै ग्यारमें, पर ने भय उपजाय ।
डरावता प्रति अनुमोदे, दण्ड चौमासी आय ॥६८॥
गृहस्थ नी रक्षा करै, रक्षा करि प्रतेह ।
अनुमोद्यां पिण दण्ड कह्यो, निशीथ तेरमें लेह ॥६९॥
दशवैकालिक तीसरे, गृहस्थ तणी मुनिराय ।
साता पूछ्यां सोलमो, अणाचार कह्यो ताय ॥७०॥
गृहस्थ नी व्यावच कियां, आठ बीसमूं न्हाल ।
अणाचार मुनिवर भणी, दाख्यो परम कृपाल ॥७१॥
करै करावे जे नथी, करता प्रति अवलोय ।
मुनि अनुमोदे पिण नहीं, तो धर्म कहै किम सोय ॥७२॥
अशणादिक गृहस्थो भणी, दियां मुनि ने दण्ड ।
अनुमोद्यां पिण दण्ड कह्यु, निशीथ पनरमें मंड ॥७३॥
शस्त्र है षटकाय नूं, गृहस्थ तणो जे शरीर ।
तसु तीखो करवा तणी, किम आज्ञा दे वीर ॥७४॥
घातिक जे षट काय ना, तास बचावे कोय ।
तसु प्रते आज्ञा किम दिये, न्याय विचारी जोय ॥७५॥

॥ हिव साधूरी आज्ञा बाहर रो गृहस्थ व्यावच
करै तसु उत्तर ॥

कोई कहै साधू तणी, व्यावच गृहस्थ करेह ।
तेह विषे स्यूं फल हुवे, तसु उत्तर हिव लेह ॥७६॥

नवम उत्तराध्ययने कह्युं, मिथिला बलती देख।
साहमूं नवि जोयो नमी, टाल्यो राग विशेष ॥५८॥
दशवैकालिक सातवें, पच्चासमों जे गाह।
माहोंमांही सुर भिडे, इम मनु माहोमांहि ॥५९॥
तिर्यञ्च माहोमांहि लड़े, एहनी थावो जीत।
दूजारी जय थावो मती, मुनि न कहे ए रीत ॥६०॥
दशवैकालिक सातवें, इक्कावनमो गाह।
वर्षा ने पुन वायरो, सीत उष्ण अधिकाइ ॥६१॥
राज विरोध रहित पुन, थावो देश सुगाल।
उपद्रव रहित हुवो वली, इम न कहे मुनि माल ॥६२॥
ए सातों होवो तथा, ए सातों मत होय।
ए विधि पिण न कहे कदा, अमल न्याय अवलोय ॥६३॥
दिशा मुढ़ जे ग्रहस्थ ने, मार्ग बतायां दण्ड।
निशीथ उद्देशे तेरमें, चौमासिक प्रचण्ड ॥६४॥
ठाणा अङ्ग ठाणे तीसरे, तृतीय उद्देशक मांय।
आत्म रक्षक तीन जे, आख्या श्री जिनराय ॥६५॥
हिन्सादिक देखी करी, दिये धर्म उपदेश।
अथवा मौन रहे मुनि, समभावे सुविशेष ॥६६॥
अथवा उठी त्यां थकी, एकन्त आगां जाय।
आत्म रक्षक ए कह्या, पिण छोडावणो कह्यो नांय ॥६७॥

पेटूची अति दुःख रे, दूठो भूती सम कही।
गृही ममत्वे कर सुक्ख रे, तेहने पिण तसु लेख पुण्य ।८५।
अटवी विषे अचेत रे, हय खर सगट बेसाण ने ।
आणे गृही पुर तेथ रे, तेहने पिण पुण्य तसु मते ॥८६॥
मुनि थाको मग मांहि रे, बोझ घणो पोथ्यां तणो ।
पगभर खिस्यो न जाय रे, ते बोझ उठायां पिण धर्म ।८७।
अरण्य वलि पुर मांहि रे, सन्त तृषातुर चेत नहीं ।
अचित उदक गृही पाय रे, तेह ने लेखे धर्म तसु ।८८।
इत्यादिक अवलोय रे, गृही मुनि ना कार्य करे ।
हरस छेद्यां धर्म होय रे, तसु लेखे सहु में धर्म ॥८९॥
मुनि नी हरस छेदन्त रे, तेहने अनुमोदे मुनि ।
दण्ड चौमासी हुन्त रे, तृतीय उद्देश निशीथ मे ॥९०॥
अनुमोद्यां ही पाप रे, तो गृही छेद्यां पुण्य किम ।
जिन आज्ञा चित्त स्थाप रे, आज्ञा बिन नहीं धर्म पुण्य
सामायक पच्चखाण रे, निर्वद्य कार्य अन्य वलि ।
गृहस्थ करे जो जाण रे, तो मुनि अनुमोदे तसु ॥९२॥
निर्वद्य कार्य ताहि रे, गृही कीधे धर्म पुण्य तसु ।
अनुमोदे मुनिराय रे, तेहने पिण धर्म पुण्य छे ॥९३॥
विणज अने व्यपार रे, सावद्य कार्य अन्य वलि ।
गृहस्थ करे तिवार रे, धर्म पुण्य तेह ने नथी ॥९४॥

जे व्यावच मुनि नी करै, तसु आज्ञा प्रभु देह ।
निरदोषण असणादि कर, तेह विषे धर्म लेह ॥७७॥
जे व्यावच मुनि नी करै, प्रभु आज्ञा नहिं देह ।
तेह विषे नहिं धर्म पुण्य, न्याय विचारी लेह ॥७८॥

साधू री हरस छेद्यां पुण्य शुभ क्रिया कहै तेहनुं उत्तर ॥

सोलम शतके भगवती, तृतीय उद्देश विमास ।
हरस छेदै जे मुनि तणो, क्रिया कही प्रभु तास ॥७९॥
हरस छेदूं हूं तुम तणी, इम पूछ्यां अणगार ।
आज्ञा न दिये गृही भणी, तिण सुं आज्ञा बार ॥८०॥
कार्य करावे नहिं मुनि, गृहस्थ कने जे अंश ।
जबरी सूं जो को करै, तो न करै तास प्रशंस ॥८१॥

॥ सोरठा ॥

गृहस्थ मुनि नी पेख रे, हरस छेदवे धर्म पुण्य ।
तो मुनि ना कार्य अनेक रे, तसु लेखे कीधां धर्म ॥८२॥
मुनि पग कांटो जाय रे, वलि फांटो चक्षु थकी ।
गृही काढे तिण आय रे, तसु लेखे धर्म गृही भणी ।८३।
दूखे पेट अपार रे, मुनि चित्त व्याकुल दुःख घणो ।
गृही मसले कर सार रे, तेहने पिण पुण्य लेखे तसु ।८४।

किण ही गृहस्थ पच्चखाण रे, हरस छेदावा ना किया।
जबरी सूं पहिछाण रे, वैद्य हरस छेदे तसु ॥१०५॥
नेम भङ्ग तसु नाहिं रे, पिण त्याग भङ्ग करवा तणो।
कामी वैद्य कहिवाय रे, तिण सुं धर्म न तेहने ॥१०६॥
तिम मुनि रै पच्चखाण रे, हरस छेदावा रहो कने।
जबरी सूं पहिछाण रे, वैद्य हरस छेदे तसु ॥१०७॥
नियम भङ्ग तसु नाहिं रे, पिण त्याग भङ्ग करवा तणो।
कामी वैद्य कहाय रे, तिण सुं नहिं तसु धर्म पुण्य ॥१०८
वैद्य हरस छेदेह रे, अनुमोदे नहिं जे मुनि।
किम तसु धर्म कहेह रे, न्याय विचारी देखल्यो॥१०९॥
अनुमोद्यां ही पाप रे, तो छेदे तसु पुण्य किम।
तृतीय करण अघ स्थाप रे, प्रथम करण तो अधिक अघ
पाप हुवे धुर करण रे, ते अघनो अनुमोदना।
तीजे करण उच्चरण रे, तिण लेखे तसु पाप है ॥१११॥
प्रथम करण पुण्य होय रे, ते पुण्य नी करणी प्रते।
अनुमोदे जे कोय रे, तास पाप किण विध हुवे ॥११२॥
करण वाला ने पुण्य रे, ते अनुमोद्यां पाप कहै।
प्रत्यक्ष वचन जबुन्य रे, न्याय दृष्टि करि देखिये ॥११३॥
छेदे तिण ने पुण्य रे, ते पुण्य री करणी प्रते।
अनुमोद्यां जो पुण्य रे, तास पाप किण विधं हुवे ॥११४॥

सावद्य कार्य ताहि रे, गृही कीधे पिण पाप छै।
अनुमोदे मुनिराय रे, प्रायश्चित्त आवै तसु ॥६५॥
हरस छेदण री ताहि रे, आज्ञा जिन मुनि न दिये।
अनुमोदे पिण नांहि रे, तिण सुं ते सावद्य अछै ॥६६॥
ग्रहस्थ पासे जाण रे, कार्य करावा मुनि तणो।
जावज्जीव पच्चखाण रे, मर्णान्ते पिण नियम ए ॥६७॥
हरस गुम्बडा आदि रे, गृही पे छेदावण तणा।
मुनि ने त्याग संवाद रे, गृही छेदे जबरी थकी ॥६८॥
मुनि अनुमोदे नांहि रे, तो तसु त्याग भागे नहीं।
पिण कामी कहिवाय रे, त्याग भगावा नो गृही ॥६६॥
तिण सुं सावद्य एह रे, वलि अनुमोदे पिण नहीं।
आज्ञा पिण नहिं देय रे, ते माटे नहिं धर्म पुण्य ।१००।
जे कामी गृही थाय रे, त्याग भगावा मुनि तणो।
धर्म नहिं तिण मांहि रे, न्याय दृष्टि अवलोकिये ॥१०१॥
किण गृही अट्ठम कीध रे, आहार च्यार त्यागन किया।
व्याकुल तृषा प्रसिद्ध रे, थयां अचेतन अन्य गृही ।१०२।
उसनोदक तसु पाय रे, कियो सचेतन अधिक सुख।
नेम भङ्ग तसु नांय रे, पिण कामी त्याग भांगण तणो।१०३।
नेम इहां अवलोय रे, नेम भङ्ग मुनि नो नथी।
पिण कामी गृही होय रे, त्याग भगावा मुनि तणो।१०४।

धर्म पुण्य नहिं होय रे, ते सघला बोलां मभे ।
तो पाप गृही ने जोय रे, जिण आज्ञा नहिं ते भणी ॥१२५॥
तिम ते इरस छेदन्त रे, अशुभ क्रिया ते वैद्य ने ।
मुनि नहिं अनुमोदन्त रे, धर्म पुण्य किण विध हुवे ॥१२६॥
इरस छेद्यां शुभ कर्म रे, तो आचारंग मे कह्या ।
त्यां सघला में धर्म रे, कहवो तिण रै लेख ए ॥१२७॥
धर्म नहिं ग्रन्थ मांहि रे, तो छेदै व्रणादि गृही ।
तिण मे पिण पुण्य नांहि रे, ए सावद्य आज्ञा नथी ॥१२८॥
इरस छेद्यां धर्म हुन्त रे, तो मुनि शिर सेती गृही ।
जूंवा पिण काढंत रे, तिण में पिण तसु लेख पुण्य ॥१२९॥
वलि मुनिवर नो सोय रे, पग चम्पी मर्द्दन करै ।
करै जो औषध कोय रे, तसु लेखे पुण्य सहु समझे ॥१३०॥
वृत्ति विषे इम वाय रे, धर्म बुद्धि छेद्यां थकां ।
क्रिया हुवे शुभ ताय रे, अशुभ क्रिया लोभादि करि ॥१३१॥
विरुद्ध अर्थ छे एह रे, सूत्र थकी मिलतो नथी ।
मुनि नहीं अनुमोदेह रे, तास क्रिया शुभ किम हुवे ॥१३२॥
इम शुभ क्रिया जो होय रे, तो औषध तेलादि करि ।
मुनि तनु मर्द्दै कोय रे, तास क्रिया पिण शुभ हुवै ॥१३३॥
वलि मुनि पग थी ताय रे, खीलो कांटो काढियां ।
तसु लेखे कहिवाय रे, तेहने पिण हुवै शुभ क्रिया ॥१३४॥

धर्म विना पुण्य नांहिं रे, शुभ जोगां थी निरजरा ।
पुण्य बन्ध तिण थाय रे, ज्यूं गहुं लारै खाखलो ॥११५॥
द्वितीय आचारंग मांय रे, तेरम अध्ययन ने विषे ।
पाठ कह्या जिनराय रे, ग्रहस्थ करे साधु तणा ॥११६॥
मुनि तनु ब्रणज थाय रे, गृही छेदे शस्त्रे करी ।
मुनि मन कर बाञ्छे नांय रे, न करावे वचकाय करि ११७
ब्रण छेदो नै ताहि रे, रुधिर राधि काढे गृही ।
मुनि मनकरि बञ्छे नांहि रे, न करावे वचकाय करि ११८
गृही मुनि पगतलि काय रे, तेल चोपड़े मर्द्दने ।
मुनि मन कर बञ्छे नांय रे, न करावे वच काय करि ११९
गृही मुनि पग थी ताहि रे, खीलो कांटो काढियां ।
मन करि बञ्छे नांहि रे, न करावे वचकाय करि १२०
मुनि मस्तक थी ताहि रे, गृही काढे जूं लीख प्रते ।
मन करि बञ्छे नांहि रे, न करावे वचकाय करि १२१
बोल इत्यादिक ताहि रे, ग्रहस्थ करै साधू तणा ।
बञ्छे नहिं मुनिराय रे, द्वितीय आचारंग तेरमे ॥१२२॥
मुनि अनुमोदे नांहि रे, तो ग्रहस्थ करै ए ऋषि तणा ।
धर्म पुण्य तिण मांहि रे, किण ही बोल विषे नथी १२३
मुनि तनु ब्रण छेदन्त रे, धर्म कहै इक बोल में ।
तो तसु लेखे हुन्त रे, धर्म सर्व बोलां मझे ॥१२४॥

दूखै पेट मुनी तणो, मौत घात अवलोय।
बाई मसलै उदर तो, तसु लेखै धर्म होय ॥ ३ ॥
वलि किण ही साधू तणी, टली पेटूची तास।
बहु दुःख-फेरेपी घणो, अन्न नहिं भावै आस ॥ ४ ॥
ते पेटूची मुनि तणी, बाई मसलै कोय।
तो उगारै लेखे तस्स, तिण में पिण धर्म होय ॥ ५ ॥
किण ही मुनि रो गोलो चल्यो, बहु दुःख बाई देख।
गोलो मसलै तेहनूं, धर्म हुवै तसु लेख ॥ ६ ॥
अग्नि विषै पड़ता प्रते, बाई बांह पकड़ेह।
बारै काढै तेहने, तो धर्म तसु लेखेह ॥ ७ ॥
ऊंचा थी पड़तो मुनि, बाई झेलै तास।
तिण मांहो पिण धर्म छै, तेहने लेख विमास ॥ ८ ॥
आखड़ पड़तां मुनि भणी, बाई झाल राखेह।
पड़ता ने बेठो करै, हुवै धर्म तसु लेखेह ॥ ९ ॥
माथो दूखै मुनि तणो, बाई शिर दाबेह।
मलम लगावै दूखणे, तसु पिण धर्म कहेह ॥ १० ॥
पाटो बांधै दूखणे, मुच्छी फुन मुसलेह।
इत्यादिक बहु मुनि तणा, बाई कार्य करेह ॥ ११ ॥
दुःखी देख साधू भणी, मरतो देखी ताय।
पीड़ाणो देखी करी, साता करै सवाय ॥ १२ ॥

वलि मुनि शिर थी सोय रे, जूंवा लीखां काढ़िया ।
तसु लेखे अवलोय रे, तिहने पिण हुवै शुभ क्रिया ॥१३५॥
मुनि अति तृषा अचेत रे, सचित अचित जल पाय कर ।
कीधो ग्रहस्थ सचेत रे, तसु लेखे हुवे शुभ क्रिया ।१३६।
थाको मुनि उजाड़ रे, गाडे हय खर चाढ़ करि ।
आणे ग्राम मझार रे, तसु लेखे हुवे शुभ क्रिया ॥१३७॥
इत्यादिक अवलोय रे, मुनि ने जे कल्पै नहीं ।
ते करै कार्य्य ग्रही कोय रे, तसु लेखे पिण शुभ क्रिया १३८
जो यां बोलां रे मांहि रे, न हुवे ग्रही ने शुभ क्रिया ।
तो इरस छेद्यां पिण ताहि रे, किम शुभ क्रिया कहिजिए ॥
इरस छेदण री तास रे, जिन मुनि आज्ञा नहिं दिये ।
जिन आज्ञा विन काम रे, कीधां नहिं छै धर्म पुण्य ॥१४०॥

॥ इति अनुकम्पा अधिकार ॥

॥ अथ चौवीसमूं सुभद्राधिकार ॥

॥ दोहा ॥

फांटो काढ्यो आंख थी, सती सुभद्रा जेह ।
किणही सूत्र में ए नहीं, कथा विषै छै एह ॥ १ ॥
जो सुभद्रा ने धर्म छै, तो मुनि मा अवलोय ।
अन्य कार्य्य बाई कियां, तसु लेखे धर्म होय ॥ २ ॥

जो यां सहु बोलां मभै, जिन आज्ञा दे नांहि ।
तो धर्म पुण्य पिण को नहीं, धर्म जिन आज्ञा मांहि ।२३।
जे मुनिश्वर ने त्याग छै, ते कार्य्य अवलोय ।
ग्रहस्थ करै को मुनि तणा, तास धर्म नहीं होय ।।२४।।
जिन रीते जिणवर कह्यो, तिण रीते अवलोय ।
अज्ञा ने मुनिवर भणी, बचावियां धर्म होय ।।२५।।
जे प्रभु सीखावे नहीं, न करै तास प्रशंस ।
आज्ञा पिण देवै नहीं, तिहां धर्म तणो नहि अंश ।।२६।।

॥ इतिः सुभद्राधिकार ॥

॥ अथ पचीसमूं गोशालाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै छद्मस्थ प्रभु, चीनाणो था जेह ।
किम चूका कहो वीर ने, तसु उत्तर हिव लेह ।। १ ।।
वलि तुम्ह कहो गोशाल ने, दीचा दीधी स्वाम ।
ते किण सूत्र विषे कह्युं, तसु उत्तर पिण ताम ।। २ ।।
वलि अनुकम्पा करि प्रभु, राख्यो जे गोशाल ।
ते विषे पिण स्युं थयुं, तसु उत्तर पिण न्हाल ।। ३ ।।
शतक पनरमें भगवती, आया सावत्थी स्वाम ।
उत्पत्ति गोशाला तणी, गौतम पूछी ताम ।। ४ ।।

फांटो काढ्यो सुभद्रा, धर्म हुसी ज्यो तास।
तो यांने पिण धर्म छै, तिण रै लेख विमास ॥१३॥
साधू रा कारज करै, बाई जे जिण रीत।
तिम कारज भाई करै, श्रमणी ना धर प्रीत ॥१४॥
जो सुभद्रा ने धर्म छै, तो श्रमणी नो जोय।
भाई फांटो आंख थी, काढ्यां पिण धर्म होय ॥१५॥
वलि कांटो पग मांहि थी, श्रमणी तणोज सोय।
भाई काढे तेह में, तसु लेखे धर्म होय ॥१६॥
वलि गोलो श्रमणी तणो, पेट पेटूची जोय।
भायो मसले तेह में, तसु लेखे धर्म होय ॥१७॥
शिर दावे श्रमणी तणूं, भायो तसु दुख देख।
इम मुच्छी मसले तसु, धर्म होसी तसु लेख ॥१८॥
मलम लगावे दूखणे, वलि अज्झा पड़ती जोय।
भायो झेले तेहने, तसु लेखे धर्म होय ॥१९॥
पड़ती ने बैठी करै, इत्यादिक अवलोय।
श्रमणी ना भायो करै, तसु लेखे धर्म होय ॥२०॥
साधू रा बाई करै, तास धर्म छै सोय।
तो श्रमणी ना भायो कियां, तिण में अघ किम होय ।२१
सुभद्रा फांटो काढियो, जो तिण में धर्म होय।
तो सारां में धर्म छै, न्याय सरिखो जोय ॥२२॥

तन्तुवाय शाला विषे, गोशालो तिहवार ।
मुझ प्रति तिण देख्यो नहीं, जोयोभ्यन्तर बार ॥१५॥
मुझ अण देख्ये निज उपधि,-ब्राह्मण ने दे ताय ।
मूंछी दाढ़ी मूँछ प्रति, मिल्यो ज मुझ सूं आय ॥१६॥
तीन प्रदक्षिण दे करी, जाव नमी कहै मुज्झ ।
थे धर्माचार्य माहरा, हूं धर्म अन्तेवासी तुज्झ ॥१७॥
तब मैं गोशालक तणां, एह अर्थ प्रति सोय ।
अङ्गीकार कीधो तदा, पाठ विषे इम जोय ॥१८॥
वृत्तिकार कह्यं एहवा, अजोग ने पिण जेह ।
अङ्गीकार कीधो प्रभु, ते अक्षीण राग पणेह ॥१९॥
वलि तेहना परिचय थकी, ईषत् थोड़ी जाण ।
स्नेह गर्भ अनुकम्पना, सद्भावे पहिछाण ॥२०॥
प्रभु छद्मस्थ पणे करि, जेह अनागत काल ।
तेह विषे जे दोष ना, अजाणवा थी न्हाल ॥२१॥
अवश्य होणहार भाव थी, कियो प्रभु अंगीकार ।
अभय देव सूरे कह्यो, वृत्ति विषे ए सार ॥२२॥

॥ ते टीका कहै छै ॥

अभ्युप गच्छामि यच्चे तस्य अयोगस्याप्यभ्युगमनं भगवत स्तदक्षीण रागतया परिचये नेषत्स्नेह गर्भानुकम्पासद्भावात् छद्मस्थ तयाऽनागत दोषानवगमादऽवश्यं भावीत्वाच्चे तस्यार्थेति भावनीयं ।

वीर कहे सुण गोयमा, गौ नी शाला मांय।
ए जन्म्यो तिण कारणे, नाम गोशाल कहाय ॥ ५ ॥
हूं तीस वर्ष घर में रही, ग्रह्यु चरण सुख राशि।
प्रथम वर्ष पख पख सुतप, अट्ठी ग्राम चौमास ॥ ६ ॥
तप मास मास दूजे वर्ष, नगर राजग्रह वार।
नालंदा पाडा मझे, चौमासो सुविचार ॥ ७ ॥
तन्तूवाय शाला विषे, हूं तप करत विशेष।
आय रह्यो गोशाल पिण, ते शाला इक देश ॥ ८ ॥
प्रथम मास नूं पारणो, विजय तणे घर कीध।
प्रगट हुआ जे पञ्च द्रव्य, महिमा देख प्रसिद्ध ॥ ९ ॥
गोशालो कह्यो मुझ भणी, थे धर्माचार्य सोय।
धर्मान्तेवासी प्रभु, हूं तुम्ह नो अवलोय ॥१०॥
तब में तेहना वचन ने, आदर न दियो कोय।
मन में भलो न जाणियो, धारी मौन सु जोय ॥११॥
द्वितीय मास नो पारणो, आणन्द ने घर कीध।
तिमहिज गोशाले कह्यो, मैं आदर नहीं दीध ॥१२॥
तृतीय मास नूं पारणो, कियो सुदर्शण गेह।
तिमहिज गोशाले कह्यो, मैं आदर नहीं देह ॥१३॥
तूर्य मास नूं पारणो, कोल्लाक संनिवेश।
ब्राह्मण बहुल तणे घरे, करि चाल्यो सुविशेष ॥१४॥

माटी मूल सहित तिण, तुरत उपाड़ी जेह ।
एकान्ते न्हाख्यो तदा, ते तिल थम्भ प्रतेह ॥३२॥
तत्खिण थोड़ी वृष्टि करि, थंभ्यो तिल थम्भ स्थान ।
थया सप्त तिल फूल चवि, एक फली में आण ॥३३॥
गोशाला साथे तदा, हूं आयो कुर्म ग्राम ।
तेहि नगर रे बाहिरे, बाल तपस्वी ताम ॥३४॥
नाम वैसियायिण तिको, तप छट्ठ छट्ठ करेह ।
रवि सन्मुख आतापना, तिहां लेतो विचरेह ॥३५॥
तसु शिर थी रवि ताप करि, यूंका भूमि पडन्त ।
तास दया अर्थे तिको, वलि २ शिरे धरन्त ॥३६॥
तब गोशालो मुझ पास थी, बाल तपस्वी पाहि ।
धीरे धीरे आय ने, बोल्यो एहवो वाय ॥३७॥
स्यूं तूं मुनि तपस्वी अछे, तथा तत्व नूं जाण ।
यती तथा तूं कदाग्रही, के जूं सिज्यातर माण ॥३८॥
गोशाला ना वचन ने, तिण आदर नहिं दीध ।
मन में भलो न जाणियो, साधी मौन प्रसिद्ध ॥३९॥
बे त्रण वार गोशाल तब, बोल्यो तिमहिज नाण ।
स्यूं तूं मुनि तपस्वी अछे, जाव जूंआं रो स्थान ॥४०॥
बाल तपस्वी शीघ्र तब, कोप चढ़्यो असराल ।
जे आतापन भूमि थी, पाछो वलियो न्हाल ॥४१॥

॥ दोहा ॥

तदन्तर हूं गोयमा, गोशाला रे साथ।
भोगविया षट् वर्ष लग, लाभ अलाभ सञ्जात ॥२३॥
सुख दुःख ने सत्कार फुन, असत्कार फुन सोय।
अनित्य जागरणा जागतो, हूं विचर्यो अवलोय ॥२४॥
मृगशिर मासे एकदा, हूं गोशाला साथ।
जे सिद्धार्थ ग्राम थी, कुर्म ग्राम प्रति जात ॥२५॥
तिल बूंटो इक देख ने, मुझ प्रति तब गोशाल।
ए तिल नीपजसेक नहीं, इम पूछ्यो तिह काल ॥२६॥
सप्त जीव तिल पुष्प ना, मरी २ ने ताय।
किहां उपजसे हे प्रभु! तब हूं बोल्यो वाय ॥२७॥
नीपजसे तिल थम्भ ए, फूल जीव जे सात।
मरी मरी ए एह ने, तिल थम्भ विषे विख्यात ॥२८॥
एक फली जे तिल तणी, तेह विषे अवलोय।
ए तिल सप्त हुस्ये सही, इम मैं भाख्यो सोय ॥२९॥
तब गोशाले मुझ वचन, श्रद्धयो नहिं मन मांहि।
प्रतीतियो पिण नहो तिणे, रोचवियो पिण नांहिं ॥३०॥
मुझ ने झूठो घालवा, धीरे धीरे तास।
पाछो वल ने आवियो, ते तिल बूंटा पास ॥३१॥

॥ दोहा ॥

उष्ण तेजु प्रति संहरी, मुझ प्रति बोल्यो वाय ।
जाण्या भगवन् आपने, जाणया २ ताहि ॥५०॥
आप तणा ज प्रसाद थी, दग्ध हुओ नहिं एह ।
संभ्रम थी गत शब्द ने, बार २ उचरेह ॥५१॥

॥ गीतक छन्द ॥

कह्यु वृति में गोशाल नो भगवन्त संरचण कियो ।
सराग भावे करि प्रभु इक दया रस थी राखियो ॥
जे उभय मुनि नवि राखस्ये ते वीतराग पणे वृत्ती ।
फुन लब्धि अण फोडण थकी वलि अवश्य भावी भाव थी ॥

॥ अत्र टीका ॥

इह च यद्गोशालकस्य संरक्षणं भगवताः कृतं तत्सरागत्वेन दयैकरसत्वाद्भगवतः यच्च सुनक्षत्रसर्वाणुभूति मुनिपुंगवयोर्न करिष्यति तद्वीतरागत्वेन लब्धिनुपजीवकत्वात् अवश्यं भावित्वाद्वे त्यवसेयं ॥इति॥

॥ दोहा ॥

गोशालो तिण अवसरे, मुझ प्रति बोल्यो वाय ।
जूं सिय्यातरियो किसूं, तुझ प्रति भाषे ताहि ॥५३॥
जाणया भगवन्त तो भणी, जाणया जाणया सोय ।
तब हूं गोशाला प्रते, इम बोल्यो अवलोय ॥५४॥

समुद्घात तैजस प्रती, करै करी अवलोय।
सात आठ पग तैं तदा, पाछो उसरी सोय ॥४२॥
मंखलि पुत्र गोशाल ने, हणवा काजे जाय।
काढे तेज शरीर थी, ए तेजु उष्ण पिछाण ॥४३॥
तिण अवसर हूं गोयमा, गोशालक नो जेह।
तेह मंखलि पुत्र नो अनुकम्पा अर्थेह ॥४४॥
वेसियायण नामे तिको, बाल तपस्वी जेह।
तेह तणो जे तेज प्रति, दूर हरण अर्थेह ॥४५॥
तापस ने गोशाल रे, इहां विचालि न्हाल।
शीतल तेजू लेश्य प्रति, मैं मूंको तिण काल ॥४६॥

चौपाई ॥

जा मुझ शीतल तेजू लेशं, तिण लेश्या करि ने सु-विशेषं। वेसियायण तापस नी जाणी, उन्ही तेजु लेश हणाणी ॥४७॥ वेसियायण तपस्वी तिह अवसर, मुझ शीतल तेजु लेश्या करि। पोता नी जे उष्ण पिछाणी, तेजु लेश्य हणाणी जाणी ॥४८॥ गोशाला ना तनु ने ताह्यो, जाण्यो किञ्चित पीड़ न पायो। देखुं छवि छेद अथ करतो, ते उष्ण तेजु लेश्य संहरतो ॥ ४६ ॥

॥ दोहा ॥

तिण अवसर गोशाल ते, सांभल वच मुझ पास ।
बिहनो यावत् पामियो, अत हो भय मन त्रास ॥६३॥
मुझ प्रति वन्दी नमण करि, इम बोल्यो अवलोय ।
संक्षिप्त विस्तीर्ण प्रभु, तेज लेश किम होय ॥६४॥
तिण अवसर हूं गोयमा, गोशाला प्रति ताहि ।
तेह मंखली पुत्र प्रति, बोल्यो इह विध वाय ॥६५॥
इक मूंठो उडदे करी, फुन जे उण्ण जलेह ।
इक पुशली तप छट छटे, अन्तर रहित करेह ॥६६॥
ऊंची बांह आतापना, सूर्य सनमुख लेह ।
तसु छेहडे षट् मास रै, तेजु लेश हुवै तेह ॥६७॥
गोशालक तिण अवसरे, ए मुझ अर्थ प्रतेह ।
सम्यक् प्रकारे विनय करि, अंगीकृत करेह ॥६८॥
तिण अवसर हूं गोयमा, गोशालक संघात ।
अन्य दिवस कुर्म ग्राम जे, नगर थकी विख्यात ॥६९॥
सिद्धार्थ फुन ग्राम जे, नगरे आवत ताम ।
जे तिल थम्भ मुझ पूछियो, झट आव्यो ते ठाम ॥७०॥
तब गोशालो मुझ प्रते, बोल्यो एहवी वाय ।
मुझ ने प्रभु तुम्ह जद कह्यु, तिल निपजसी ताहि ॥७१॥

हे गोशाला तूं इहां, बेसियायण नामेह ।
बाल तपस्वी प्रति तदा, देखी नेव करेह ।५५॥
धीरै धीरै ऊसरो, मुझ पासा थी ताहि ।
जिहां बेसियायण तिहां. जई बोल्यो इम वाय ॥५६॥

चौपाई ॥

स्यूं तूं मुनि तपस्वी छै कोई, तथा तत्व नो जाण सु होई । स्यूं तूं यती कदाग्रही कहियो, के तूं जूं नूं सिय्यात्तरीयो ॥५७॥ बेसियायण तपस्वी तिहवारं, तुझ बच आदर न दियै लिगारं । मन में पिण भलो न जाणे. रह्यो मून धरी तिह ठाणे ॥५८॥ अहो गोशाला तूं तब फेर, तिण बाल तपस्वी प्रतेज फेर । तूं मुनि के जाव जूं सैया तरियो, इम बे त्रण वार उच्चरियो ॥५९॥ तव बाल तपस्वी शीघ्र कोप्यो, जाव पाछो ऊसर चित्त रोप्यो । तुझ हणवा तेजू मूकेह, तब हूं तुझ अनुकम्पा अर्थेह ॥६०॥ तिणरी उष्ण तेजू हणवा न्हाल, मूं की शीतल तेजू अन्तराल । तब बाल तपस्वी चित्त ठाणी, उष्ण तेजू हणाणी जाणी ॥ ६१ ॥ पीड तुझ तनु नवि देखेह । उष्ण तेजु लेश्या संहरेह । तब मुझ प्रति बोल्यो वाय, जाण्या २ हे भगवन् ताहि ॥ ६२ ॥

इम निश्चय गोशालका, बनस्पति रै मांहि ।
पउट्ट परिहार करै तिके, मरि मरि तसु तन आय ॥८२॥

॥ टीका ॥

पारिवृत्य २ मृत्वा २ यस्तस्यैव बनस्पति शरीरस्य परिहारः परिभोग स्तत्रे पोत्यादो सौ परिवृत्य परिहारस्त ।

॥ वार्त्तिका ॥

बनस्पति कहतां बनस्पति ना जीव जे पारिवृत्यं २ क० मरी मरी ने पहिज्ज बनस्पति ना शरीर नो परिहार क० परिभोग ते तिहाँइज उपजवुं ते पारिवृत्य परिहार कहिइं ते प्रति परिहरति कहतां करै ॥

॥ दोहा ॥

तिण अवसर गोशाल ते, मुझ इम कह्यो छतेह ।
एह अर्थ श्रद्धे नहीं, नहीं प्रतीत न रुचेह ॥८३॥
एह अर्थ अण श्रद्धतो, जिहां तिल स्थम्भ त्यां आय ।
ते तिल थम्भ थी तिल तणी, सङ्गखी तोड़े ताहि ॥८४॥
ते तिल सगली तोड़ने, करतल विषे ज सोय ।
सप्त तिल पाड़े तदा, प्रगट पणे सु जोय ॥८५॥
तिण अवसर गोशाल ने, गिणतां दे तिल सात ।
एहवुं मन में चिन्तव्युं, जाव समुत्पन्न जात ॥८६॥
इम निश्चय सहु जीव पिण, पउट परिहार करेह ।
हे गोतम गोशाल नूं, पउट वाद कह्युं एह ॥८७॥

तिमज सप्त पुष्प जीव चवि, एक संगली मांय।
हुस्यै सप्त तिल तेह बच, मिथ्या प्रत्यक्ष दिखाय ॥७२॥
ते तिल स्थम्भ न नीपनो, सप्त पुष्प ना जीव।
चवी सप्त तिल नवि थया, इक संगली मे अतीव ॥७३॥
तिण अवसर हूं गोयमा, गोशालक प्रति आय।
बोल्यो तैं मुझ जद वचन, श्रद्धो नहि मन मांय ॥७४॥
प्रतीतियो नहिं रोचव्यो, एह अर्थ अवलोय।
मनमे अश्रद्धतो छतो, झूंठो थालण मोय ॥७५॥
ए मिथ्यावादी हुवो, तूम मन करो विचार।
मुझ थी पाछो ऊसरी, धीरे धीरे धार ॥७६॥
जिहां तिल थंभ तिहां आयने, यावत एकान्त ठाम।
न्हांख्यो ते उपाड़ ने, हे गोशालक तांम ॥७७॥
तत्खिण वादल अभ् दिव्य, प्रगट थयो तिहवार।
अभ् बदल ते शीघ्र ही, तिमहिज यावत धार ॥७८॥
तेह तिलनां स्थंभ नो, एक संगली मांहि।
तदा ऊपना सप्त तिल, जेम कह्यु तिम ताहि ॥७९॥
हे गोशाला तेह ए, तिल नूं स्थभ निष्पन्न।
नथी तेह अण नीपनूं, निश्चय करो सुजन्न ॥८०॥
तेह सप्त पुष्प जीव चवि, ए तिल स्थम्भ नो जाण।
एक सगली ने विषे, थया सप्त तिल आण ॥८१॥

रे काश्यव तूं इम कहै, मखलो सुत गोशाल ।
धर्मान्तेवासी मांहरो, पिण हूं नहीं ते न्हाल ॥९६॥
मखलो सुत गोशाल ते, धर्मान्तिवासी तोय ।
ते तो काल करी गयो, सुरलोके अवलोय ॥९७॥
महाकल्प चौरासी लक्ष, सप्त देव भव सार ।
सप्त संयूथा सन्नि गर्भ, सप्त पउट परिहार ॥९८॥
इत्यादिक निज शास्त्र नी, वत्तिका कही बणाय ।
चोर उदाई नाम हूं, पिण गोशालो नांय ॥९९॥
गोशाला रे तनु विषे, अम्हे कीधूं प्रवेश ।
सप्तम् पौट परिहार ए, इत्यादिक जे अशेष ॥१००॥
चोर तणो दृष्टान्त प्रभु, गोशाला ने दीध ।
तब गोशालो बोलियो, अगल डगल बहु विध ॥१०१॥
श्रवानु भूत्ति मुनि तदा, गोशाला पै आय ।
भगवन्त ने अनुराग करि, बोल्यो एहवो वाय ॥१०२॥
समण माहण पै एक पिण, आर्य्य बच धारेह ।
तो पिण तसु बन्दे नमै, यावत सेव करेह ॥१०३॥
तो स्युं कहिवो गोशाल तुझ, भगवन्त प्रवर्या दीध ।
निश्चय भगवन्त मूंडियो, शिष्य पणे सुप्रसिद्ध ॥१०४॥
वृत्ति पणे करिने बली, सेव्यो भगवन्त तोय ।
सीखावी भगवन्त तुझ, तेजु लेश अवलोय ॥१०५॥

हे गोतम गोशाल नूं, मुझ पासा थी जेह।
आत्मइ' करि के तसु, पडिवुं जुदो कहेह ॥८८॥

॥ वार्त्तिका ॥

आयाए पाठ नो अर्थ, वृत्तीकार आयाए पाठ ना वे अर्थ किया:— भगवन्त कहै म्हारा पासा थी आयाए कहतां आत्मई करी अपक्रम ते जुदो पड्यो निसस्यो अथवा आयाए कहतां आदाय तेजू लेश्या नूं उपदेश ग्रहण करी ने जुदो पड्यो।

॥ इति आयाए पाठ नूं अर्थ ॥

तिण अवसर गोशाल ते, इक मुठि उडदेह।
इक पुसली उण्णोदकी, छट् यावत् विहरेह ॥८९॥
तिण अवसर गोशाल ते, षट् मासे अवलोय।
संक्षिप्त विस्तीर्ण तिका, तेजु लब्धवन्त होय ॥९०॥
तिण अवसर गोशाल पै, पार्श्वनाथ ना जोय।
षट् साधू भागल हुन्ता, आवी मिलिया सोय ॥९१॥
गोशाला ने गुरु पणे, पडिवज्झ रहिता जेह।
ते साधे तिमहिज सहु, पूर्वं कह्या तिम लेह ॥९२॥
यावत् ए अजिन छतो, पिण जिन शब्द उचार।
प्रकाशमान छतो ज ए, विचरै छै इहवार ॥९३॥
मोटी प्रषध मे विषे, वीर कही ए बात।
गोशालो सुण कोपियो, निज संघ प्रति ले साथ ॥९४॥
वीर समीपे आय ने, बोल्यो एहवी वाय।
भलो कहै रे काशवा, आछो कहै रे ताहि ॥९५॥

छद्मस्थ थको छः मास मे, काशव काल करेह।
प्रभु कहै हूं वर्ष सोल लग, गन्ध गज जिम विचरेह।।११६।।
ते मूंकी तेजू तिका, पैठी तुझ तनु न्हाल।
तेह थी सप्तम निशि मझे, तूं करसी छद्मस्थ काल।।११७।।
पुर मे जन कहै उभय जिन, लवे माहो मांहि वाय।
कुण सांचो झूंठो कवण, आश्चर्य ए अधिकाय।।११८।।
गोशालो निज स्थान जई, सप्तम निशि सुविचार।
सम्यक्त पामी आत्म निन्द, काल कियो तिहवार।।११९।।
प्रभु वेदन षट् मास सही, पछे बिजोरा पाक।
लीधे तनु प्राक्रम वध्यो, प्रभुजी होगया चाक।।१२०।।
गोयम तत्र वे मुनि तणी, पूछी फुन पूछेह।
अन्तेवासी आपरो, कुशिष्य गोशालक जेह।।१२१।।
काल करी ने किहां गयो, प्रभु भाष्यो सुविशाल।
अन्तेवासी मांहरो, कुशिष्य गोशालक न्हाल।।१२२।।
श्रमण घातक छद्मस्थ थको, काल करी सुजगीस।
अच्युत् कल्पे ऊपनो, स्थिति सागर बावीस।।१२३।।
भगवती पनरमे शतक मे, छै बहुलो विस्तार।
इहां संक्षेप थकी कह्यो, गोशालक अधिकार।।१२४।।
कही सूत्र में तिमज कह्युं, हिव तसु कहिये न्याय।
प्रभु शिष्य कियो गोशाल ने, वलि बचायो ताय।।१२५।।

वलि भगवन्त बहु श्रुत कियो. भगवन्त थकी ज सोय ।
भाव अनार्य पडिवज्झियो, ते माटे अवलोय ॥१०६॥
मति इम हे गोशाल तुझ, कारण योग नहिं एह ।
तेहिज छाया ताहरी, नहीं अनेरी जेह ॥१०७॥
सुण गोशालो कोपियो, तेजु लेश करि ताम ।
श्रवानु भूति मुनि प्रते, भस्म कियो तिण ठाम ॥१०८॥
द्वितीय वार गोशाल फुन, कठिन बचन अधिकाय ।
नष्ट विणष्टादिक कह्या, तब सुनचत्र मुनिराय ॥१०९॥
जिम श्रवानुभूति कह्यो, तिमहिज कह्यो विचार ।
गोशालो तब तेज करि, परितापे तिहवार ॥११०॥
प्रभु पै आवी वन्दि नम, महाव्रत प्रति आरोप ।
सन्त सत्यां ने खाम ने, कीधो काल अकोप ॥१११॥
तृतीय वार गोशाल फुन, प्रभु प्रति निठुर वदेह ।
तब प्रभु गोशाला प्रते, मुनि कह्यो तिमज कहेह ॥११२॥
हे गोशाला तो भणी, मैं प्रवर्ज्या दीध ।
यावत मैं बहु श्रुति कियो, म्लेच्छ भाव ते कीध ॥११३॥
गोशालो सुण कोपियो, तनु थी काढे तेज ।
प्रभु तनु परितापे तदा, पिण तनु नहिं पेसेज ॥११४॥
गोशाला रा तनु विषे, पाछो पैठो आय ।
लागी दाह शरीर में, बोल्यो प्रभु प्रति वाय ॥११५॥

॥ दोहा ॥

अक्षीण राग पणे करी, अङ्गीकार प्रति ख्यात।
ते राग भाव में धर्म किम, समझो सुगण सुजात ।१३४।
वलि परिचय करी ने कह्यो, ईषत् स्नेह अनुकम्प।
एह कार्य आछो हुवे, तो इह विध किम मयंम्प ।।१३५।।
अक्षीण राग पणा विषे, परिचा विषय सुजोय।
स्नेह अनुकम्पा ने विषे, भलो कार्य किम होय ।१३६।
वलि अनागत दोष ना, अजाणवा थी जोय।
अङ्गीकार कीधो कह्यो, ते दोष किसो अवलोय ।१३७॥
ए तिल नीपजसी कह्यो, तिण दीधो तुरन्त उपाड़।
हिन्सा जीवांरी हुई, ए अवगुण अवधार ।।१३८।।
वलि लब्धि फोड गोशाल नो, रत्तक कीधो ताय।
तिण बहु मिथ्यात बधावियो, ए पिण अवगुण थाय।१३९।
वलि तेजु लेश्या प्रते, सीखावी भगवान।
तिण लेश्याइं मुनि हण्या, ए पिण अवगुण जान ।१४०।
वलि प्रतापना प्रभु ने करी, तेजू लेश्य करेह।
वेदन अति षट् मास सही, प्रत्यक्ष अवगुण एह ॥१४१॥
वलि तिल बूंटो नीपनो, एम कह्यो भगवान।
तत्क्षिण तिणे उपाडियो, ए पिण अवगुण जान ।।१४२।।

गोशाला नी वारता, प्रभुजी धुर सूं ख्यात ।
मास २ तप द्वितीय वर्ष, म्हे कीधो सुविख्यात ॥१२६॥
प्रथम मास ने पारणे, विजय तणे घर कीद्ध ।
गोशालो कह्यो आप गुरु, हूं तुझ शिष्य प्रसिद्ध ॥१२७॥
तसु अङ्गीकार मैं नवि कियो, द्वितीय मास ने जाण ।
पारण गोशाले कह्युं, तिणहिज रीत पिछाण ॥१२८॥
अङ्गीकार न कियो तदा, तृतीय मास रै जेह ।
पारण फुन गोशाल कह्युं, पिण मैं अङ्गीकृत न करेह ।१२९।
जो शिष्य करवा नी रीत हुवै, तो प्रथम वार ही पेख ।
अङ्गीकार करता प्रभु, न्याय विचारी देख ॥१३०॥
तूर्य मास ने पारणे, तिमज कह्युं गोशाल ।
मुझ धर्माचार्य तुम्हे, हूं धर्मअन्तेवासी न्हाल ॥१३१॥
मैं अङ्गीकार कीधो तसु, इम कह्यो सूत्र विषेह ।
वृत्तिकार एहवो कह्युं, सांभलजो चित्त देह ॥१३२॥

॥ गीतक छन्द ॥

अक्षीण राग पणा थकी, परिचय करी ने जानियं ।
ईषत् स्नेह अनुकम्पना, सद्भाव थी पहिछानियं ॥
छद्मा अनागत दोष ना, अजाणपणा थी आदृतं ।
फुन अवश्य भावी भावथीज, अजोग प्रति अङ्गीकृतं ॥

प्रभु कह्यो अन्तेवासी मुझ, कुशिष्य गोशाल जगीश ।
अच्युतकल्पे ऊपनो, स्थित सागर बावीस ॥१५३॥
नवमें शतके भगवती, तेतीसम उद्देश ।
गोतम पूछ्यो वीर प्रति, सांभल जो सुविशेष ॥१५४॥
अन्तेवासी कुशिष्य तुझ, जमाली अणगार ।
काल करी किहां ऊपनो, प्रभु भाखे तिहवार ॥१५५॥
अन्तेवासी कुशिष्य मुझ, जमाली अणगार ।
लन्तक कल्पे ऊपनो, किल्विष पणे विचार ॥१५६॥
जमाली ने कुशिष्य कह्युं, तिमहिज कुशिष्य गोशाल ।
ते माटे बिहुं शिष्य हुन्ता, देखो नयण निहाल ।१५७।
अन्तेवासी बिहुं भणी आख्या श्री जगनाथ ।
वलि कुशिष्य बिहुं ने कह्या, देखी तज पखपात ॥१५८॥
कुपूत कहिवे पूत धुर, तिणहिज रीत पिछाण ।
कुशिष्य कहिवे शिष्य धुर, समझो चतुर सुजाण ।१५९।
अंगीकृत आख्यो प्रथम, श्रवानुभूति ख्यात ।
कह्यो सुनक्षत्रमुनि वलि, फुन प्रभु कह्यो विख्यात ।१६०।
तास कुशिष्य कह्यो वलि, ए पञ्च ठाम पहिछान ।
दीक्षा गोशाला तणी, देखोजी बुद्धिवान ॥१६१॥
नवमें ठाणे वृत्ति में, जिन छद्मस्थ सुजोय ।
दीक्षा न दिये इम कह्यो, शिष्य वर्ग ने सोय ॥१६२॥

एम अनागत दोष ना, अजाणवा थी न्हाल ।
प्रभु छद्मस्थ पणे कियो, अङ्गीकृत गोशाल ॥१४३॥
जो ए अवगुण जाणता, तो केम करै अङ्गीकार ।
पिण उपयोग दियो नहीं, वारूं न्याय विचार ॥१४४॥
जो अपर अनागत दोष हुवै, तो कहिये तसु नाम ।
प्रगट वृत्ति में भाखियो, दोष अनागत ताम ॥१४५॥
कोई कहै गोशाल ने, अंगीकार कृत ख्यात ।
पिण दीक्षा दीधी इसो, किहां पाठ अवदात ॥१४६॥
श्रवानु भूति मुनि कह्यो, हे गोशाला तोय ।
प्रवर्ज्या दीधी प्रभु, वलि प्रभु मूंड्यो सोय ॥१४७॥
वृत्ति पणे सेव्यो प्रभु, सीखायो भगवान ।
वलि बहु श्रुति प्रभु कियो, प्रगट पाठ पहिछान ॥१४८॥
इमज सुनक्षत्र मुनि कह्यो, इम प्रभु कह्यो प्रसिद्ध ।
हे गोशाला तो भणी, म्हे ज प्रवर्ज्या दीध ॥१४९॥
यावत् मैं बहु श्रुत कियो, मुझ सेती इहवार ।
भाव अनार्य्य पडिवज्यो, इम आख्यो जगतार ॥१५०॥
तब गोशाले जिन ऊपरै, मूंकी तेजू लेश ।
प्रभु षट् मास लगै सह्यो, वेदन अधिक विशेष ॥१५१॥
जे षट मास थयां पछे, प्रभु तनु थयो निराम ।
गौतम पूछ्यो कुशिष्य तुझ, मर उपनो किण ठाम ॥१५२॥

भावे स्नेह अनुकम्प कही, भावे मोह अनुकम्प ।
श्री जिन आज्ञा बार है, सावद्य ते प्रपञ्च ॥१७०॥
मोह कर्म ना उदय थी, स्नेह राग ए होय ।
तिण सुं स्नेह अनुकम्प ते, मोह अनुकम्पा जोय ।१७१॥
स्नेह किण सुं करिवो नहिं, भाख्यो श्री जिनराय ।
उत्तराध्ययने आठमें, दूजी गाथा मांय ॥१७२॥
ईषत् स्नेह अनुकम्प कही, ते अनुकम्पा सोय ।
सावद्य पाप सहित छै, अथवा निर्वद्य जोय ॥१७३॥
जो निर्वद्य अनुकम्प ए, तो ईषत् क्युं ख्यात ।
पूरण कृपा कारि प्रभु, इम कहता अवदात ॥१७४॥
ईषत् स्नेह अनुकम्प ए, जो सावद्य छै सोय ।
तो सावद्य में धर्म नहीं, हिये विमासी जोय ॥१७५॥
ईषत् लोभ भलो नहीं, ईषत् भलो न मान ।
ईषत् माया नहीं भली, तिम ईषत् स्नेह जान ॥१७६॥
ईषत् झूठ भलो नहीं, ईषत् भलो न क्रुद्ध ।
ईषत् अदत्त भलो नहीं, तिम ईषत् स्नेह अशुद्ध ॥१७७॥
गोतम ने जिन स्नेह थी, अटक्यो केवल ज्ञान ।
तो गोशाला रा स्नेह थी, धर्म पुण्य किम जान ॥१७८॥
काल अनागत दोष पिण, वृत्तिकार आख्यात ।
तो प्रशंसवा योग्य ए, 'कारुर्य' केम कहात ॥१७९॥

॥ अथ ठाणांग नवमें ठाणे टीका में कह्यो छै तीर्थंकर छद्मस्थ थका दीक्षा न दिये ते गाथा लिखिए छै ॥

न परोवए सिया नय, छउमत्था परोवए ।
संपि दिविनय सीस वग्गां, दिरकन्ति जिणां जहासव्वे ॥
केवल उपजियां विना, दीक्षा दीधी आप ।
अक्षीण राग पणे करी, परिचय स्नेह प्रताप ॥१६३॥
वलि अजाण पणा थकी, जेह अनागत दोष ।
वृत्तिकार पिण इम कह्यो, तो मुझ थी क्यूं अपसोस ॥
अयोग ने अंगीकार कृत, एम कह्यु वृत्तिकार ।
जे दीक्षा देवा योग्य नहीं, तेह अयोग विचार ॥१६५॥
अक्षीण राग पणे कह्यो, ते राग भाव रे मांहि ।
आणां केवली नो अछै, अथवा आज्ञा नाहिं ॥१६६॥
वलि परिचय करि ने कह्यो, ते परिचय पहिछान ।
आछो छै अथवा बुरो, न्याय विचार सुजान ॥१६७॥
ईषत् स्नेह गर्भानुकम्प, सभाव थी अवलोय ।
अंगीकृत कह्यु वृत्ति में, तास न्याय हिव जोय ॥१६८॥
जे अनुकम्पा ने विषे, स्नेह रह्यो छै ताय ।
स्नेह गर्भ अनुकम्प ते, मोह अनुकम्प कहाय ॥१६९॥

इहां सराग पणे कह्यो, ते सराग पणा रे मांय ।
धर्म पुण्य किण विध हुवे. देख विचारो न्याय ॥१९०॥
सराग पणो कहि न पछे, दया एक रस ख्यात ।
जिसो सराग पणो हुवे, तिसो दया ए थात ॥१९१॥
सराग भाव निर्वद्य नहीं, तिम दया न निर्वद्य एह ।
दोनूं सावद्य जाणवा, न्याय विचारी लेह ॥१९२॥
बे साधु नवि राखिया, ते वीतराग भावेह ।
दयावन्त पिण जद हुन्ता, पिण सावद्य दया न तेह ॥१९३॥
वीतराग थयां पछे, भाव सराग न होय ।
तिम वीतराग थयां पछे, सावद्य दया न कोय ॥१९४॥
कोई कहै सावद्य दया, किहां कही छै ताम ।
न्याय कहूं छूं तेहनो, सुण राखो चित्त ठाम ॥१९५॥
हेमि नाम माला विषे, आठ दया रा नाम ।
दया शूक कारुण्य फुन, करुणा घृणा जु ताम ॥१९६॥
कृपा अने अनुकम्प फुन, वलि अनुक्रोश कहाय ।
नाम एकार्थ आठ ए, द्वयीय कांड रै मांय ॥१९७॥

॥ अथ हेमिनाम माला में आठ दया रा नाम कह्यो ते लिखिये छै ॥

सूरतोय दयाशुकः कारुण्यं करुणा घृणा कृपानु कम्पानु क्रोशो ॥इति॥

जिन ऋष स्हामो जोवियो, रत्न द्वीप नी जेण ।
देवी नी करुणा करी, ज्ञाता नवम् अध्ययन ॥१९८॥

होणहार निश्चय तिको, टाल्यो नहीं टलन्त ।
तिण कारण गोशाल ने, दीक्षा दी भगवन्त ॥१८०॥
वृत्तिकार पिण इम कह्यो, तुम ने पिण तिण रीत ।
कहिवुं तेहिज उचित छै, वारूं वचन वदीत ॥१८१॥
कोई कहै ए वृत्ति ने, तुम्हे न मानो कोय ।
तो बात वृत्ति नी किम कहो, हिव उत्तर अवलोय ।१८२।
भगवती शतक अठारमें, प्रभुजी भणी प्रत्यक्ष ।
सोमिल प्रश्नज पूछिया, शरसव भक्ष अभक्ष ॥१८३॥
जिन कह्यो जे ब्राह्मण तणा, शास्त्र विषे आख्यात ।
शरसव ना बे भेद है, इत्यादिक अवदात ॥१८४॥
तो ब्राह्मण ना शस्त्र प्रते, स्युं मान्युं जगनाथ ।
पिण तेहने समझायवा, तसु मतनी कही बात ।१८५।
तिम मिलती ए वार्त्ता, वृत्ति तणी आख्यात ।
जे वृत्ति माने तेहने, समझावा कही बात ॥१८६॥
वलि प्रभु गोशाला तणी, अनुकम्पा चित्त ल्याय ।
शीतल तेजू फोड़वी, रक्षण कीधो ताय ॥१८७॥
वृत्तिकार इम आखियो, तेह सराग पणेह ।
एक दया ने रस थकी, रक्षण कीधो एह ॥१८८॥
बे मुनि ने न बचावसी, तब वीतराग भावेह ।
लब्धि अण फोड़वा थकी, अवश्य भावी एह ॥१८९॥

तिण सूं तेजु लब्धि प्रति, फोड़ी ने भगवान।
गोशाला ने राखियो, छद्मस्थ थकां पिछाण ॥२०९॥
केवल ज्ञान थयां पछे, लब्धि फोडवणी नांहिं।
बहु ठामे वर्जी प्रभु, देखो सूत्रे मांहि ॥२१०॥
पद छत्तीसम पन्नवणा, वैक्रिय लब्धिज ताय।
फोड्यां क्रिया जघन्य तणा, उत्कृष्ट पञ्च ही पाय ॥२११॥
इमहिज आहारिक लब्धि प्रति, फोड्यां थी पहिछान।
जघन्य तीन क्रिया कही, उत्कृष्ट पञ्च सुजान ॥२१२॥
इमहिज तेज लब्धि प्रति, फोडे तेहने जोय।
जघन्य तीन क्रिया कही, उत्कृष्ट पञ्च ज होय ॥२१३॥
तेजु लब्धि जे फोडवी, प्रभु छद्मस्थ पणेह।
केवल लह्यां क्रिया कही, वैक्रिय नी परे एह ॥२१४॥
सराग भाव करि कार्य कृत, तास स्थाप स्यु होय।
केवल लह्यां पछे कह्यो, तास स्थाप छे सोय ॥२१५॥
कोई कहे अनुकम्प करि, प्रभु राख्यो गोशाल।
ते माटे इहां धर्म छे, उत्तर तास निहाल ॥२१६॥
वृद्ध तणी अनुकम्प करि, कृष्ण्यो ईंट उपाड़।
तास घरे मेली कही, अन्तगडे अधिकार ॥२१७॥
सुलसां नी अनुकम्प करि, पुत्र देवकी नां ज।
संहरया हरण गवेषि सुर, सूत्र अन्तगड साज ॥२१८॥

करुणा नाम दया तणो, ते माटे सुविचार ।
एह दया सावद्य छे, श्री जिन आज्ञा बार ॥१९९॥
उत्तराध्ययन बावीस में, नेमनाथ भगवान ।
जीव देख अनुक्रोश मन, पाठ विषे पहिछान ॥२००॥
अनुक्रोश ते करुणा कही, अविचूरि में अर्थ ।
ते माटे करुणा दया, निर्वद्य एह तदर्थ ॥२०१।
तिण सूं भाव सराग नो, दया न सावद्य सोय ।
अष्टादश में देखलो, दशमूं राग सुजोय ॥२०२॥
लब्धि अणफोड़ववा थकी, वीतराग भावेह ।
बे साधू नवि राखस्ये, ए पिण वृत्ति विषेह ॥२०३॥
तिण सूं सराग भाव करि, शीतल तेजू लेश ।
लब्धि फोड़वी राखियो, गोशालक सुविशेष ॥२०४॥
गोशालक हणवा भणी, बाल तपस्वी जेह ।
उष्ण तेजु लेश्या प्रते, मूंकी पाठ विषेह ॥२०५॥
भगवन्त अनुकम्पा करी, लेश्या शीतल तेह ।
मूंकी गोशालक भणी, रक्षण करण कहेह ॥२०६॥
उष्ण तेजु लेश्या कही, शीतल तेज हो लेश ।
तेजु लेश ए बिहुं कही, पाठ विषे सुविशेष ॥२०७॥
उष्ण तेज लेश्या प्रती, तापस मूंकी सोय ।
लेश्या शीतल तेज प्रति, प्रभू मूंकी अवलोय ॥२०८॥

भगवती गोतम गुण मझे, तेजु लेश्या प्रति ताहि।
संकोचे ते गुण कह्यो, फोड्यां गुण कह्यो नाहिं ॥२२९॥
इत्यादिक बहु सूत्र में, तेजू वैक्रिय आदि।
मुनि ने लब्धि न फोडणी, देखो धर अह्लाद ॥२३०॥
जो लब्धि फोड गोशाल ने, राख्यां धर्मज होय।
तो बे मुनि प्रति राख्या न क्यूं, न्याय विचारी जोय ।२३१
जब कहे बे मुनिवर तणो, मृत्यु जाण भगवान।
तिण कारण राख्या नहीं, हिव तसु उत्तर जाण ॥२३२॥
वृत्तिकार तो इम कह्यो, वीतराग भावेह।
लब्धि अण फोड्यां थकी, वलि अवश्य भावी छे एह ॥२३३॥
शीतल तेजू लब्धि प्रति, अण फोड्वा थी ख्यात।
तिण सुं शीतल तेजु पिण, किम फोडे जगनाथ ॥२३४॥
ज्यो प्रभु बे मुनिवर तणो, जाण्यो मृत्यु जिवार।
तो मुनि गौतम आदि त्यां, क्यूं नहिं कीधी सार ।२३५।
गौतम आदि विषे हुन्तो, शीतल तेजु लेश।
त्यां लब्धि फोड राख्या न क्युं. बे मुनि प्रति सुविशेष॥
जब कहे गौतम आदि प्रते, वर्ज्यां प्रभुजी तोय।
तिण सुं मुनि राख्या न बे, निसुणो तेहनो न्याय ॥२३७॥
प्रभु तो आनन्द ने कह्यो, तूं मुनि प्रते कहेह।
धर्म प्रति चोयण मत करो, गोशालक थी जेह ॥२३८॥

पछ्य धारणी भोगव्यो, गर्भ अनुकम्पा आण।
अभय अनुकम्पा सुर करी, दोहलो पूर्यो जाण ॥२१९॥
हरकेशी मुनिवर तणी, अनुकम्पा करि यच्च।
रुधिर वमन्ता छात्र कृत, उत्तराध्ययन प्रत्यच्च ॥२२०॥
वलि मुनि नी व्यावच अर्थ, छात्रां ने दुःख देह।
ए पिण सावद्य जाणवो, तिम अनुकम्प कहेह ॥२२१॥
अनुकम्पा त्रस जीवनी, आणी ने मुनिराय।
बांधे बांधतां प्रति, अनुमोद्यां दण्ड आय ॥२२२॥
इमहिज छोडे छोडतां प्रति, मुनि जे अनुमोदेह।
निशीथ उद्देशे बारमें, दण्ड चौमासी कहेह ॥२२३॥
अनुकम्पा ए सहु कही, पाठ विषे पहिछाण।
जिन आज्ञा नहिं तेह में, तिण सुं सावद्य जाण।२२४।
तिम प्रभु गोशाला तणी, अनुकम्पा चित्त आण।
तेजू लब्धिज फोडवी, तिण सुं सावद्य जाण ॥२२५॥
आहारिक लब्धि फोडवे, अधिकरण कह्यो तास।
शतक सोलमें भगवती, प्रथम उद्देश विमास ॥२२६॥
वैक्रिय लब्धि फोडवे, कह्यो विराधक ताहि।
भगवती तीजे शतक में, तूर्य उद्देशा मांहि ॥२२७॥
जङ्घा विद्या चारणा, लब्धि फोडवी जाय।
ते थानक विन पडिकम्यां, कह्या विराधक ताय ॥२२८॥

छेदे हस्थ मुनि तणो, क्रिया वैद्य ने ख्यात।
शतक सोलमें भगवती, तृतीय उद्देश सज्ञात ॥२४९॥
आज्ञा श्री जिनवर तणी, जेह कार्य मे नांय।
तेह कार्य कीधां छतां, धर्म पुण्य किम थाय ॥२५०॥
तिमज लब्धि फोड़ण तणी, श्री जिन आण न देह।
धर्म पुण्य किम तेह में, न्याय विचारो एह ॥२५१॥
कोई कहै छद्मस्थ प्रभु, फोड़ी लब्धि जिंवार।
दण्ड लियो स्युं तेहनो, हिव तसु उत्तर सार ।२५२।
राजमती ने बोलियो, विषय वचन रहनेम।
प्रायश्चित चाल्यो न तसु, पिण लियो हुस्ये धर प्रेम॥२५३॥
जल विच पाली नाव जिम, आद्रमुते ऋषि कीध।
प्रायश्चित चाल्यो न तसु, पिण लीधो हुस्ये प्रसिद्ध ॥२५४॥
मोह बशे सीहो मुनी, रोयो मोटे साद।
प्रायश्चित्त चाल्यो न तसु, पिण लीधो हुस्ये संवाद ॥२५५॥
धर्म घोष ना सन्त जी, आवी चोहटा मांहि।
नाग श्री हेली निन्दी, तसु दण्ड चाल्यो नांहि ॥२५६॥
हणसे हय नृप सारथी, नाम सुमङ्गल सन्त।
प्रायश्चित चाल्यो न तसु, शतक पनरम् उहन्त ॥२५७॥
कोई कहै आलोयणा, पडिक्कमणा कही तास।
तिण सुं ए दण्ड तेहनुं, हिव उत्तर सुविमास ॥२५८॥

पिण मुनि प्रते न बचावणा, इम तो आख्यो नांय ।
तिण सुं गौतम आदि जे, मुनि नहीं राख्या कांय ॥२३९॥
पिण जे लब्धि फोडण तणी, श्रीजिन आज्ञा नांय ।
तिण सु' शीतल तेजु प्रति, किम फोडे मुनिराय ॥२४०॥
लब्धि फोड़ गोशाल ने, राख्यो श्री भगवान ।
जद छद्मस्थ पणे हुन्ता, मोह स्नेह बश जान ॥२४१॥
जल थी नाव भरीजती, देखी ने मुनिराय ।
गृही प्रते बतावणो नही, द्वितीय आचाराङ्ग मांय ॥२४२॥
डूबे आप अने वली, जे डूबे बहु जीव ।
तसु अनुकम्प करे नहीं, रहै समभाव अतीव ॥२४३॥
मात बचावा ऊठियो, चूलणि पिया मिछाण ।
तसु पोषह भागो कह्यो, सप्तम अङ्ग जाण ॥२४४॥
मिथिला बलती देख नमि, स्वामी जोयी नाहिं ।
देखो उत्तराध्ययन में, नवमें अध्ययने ताहि ॥२४५॥
दशवैकालिक सातमे, देव मनुष तिर्यञ्च ।
विग्रह लडता परस्पर, देखी ने मुनि सञ्च ॥२४६॥
एहनी होवे जीत पुन, एहनी होवे हार ।
एहवुं न कहे महा मुनी, हिव तसु न्याय विचार ॥२४७॥
हार जीत नवि बञ्छवी, तो तास विचे पड़ सन्त ।
कीम करावे हार जय, देखोजो मति मन्त ॥२४८॥

छट्ठा गुणठाणा विषे, आखी च्यार कषाय ।
षट् लेश्या संज्ञा चिहुं, अशुभ जोग पिण आय ॥२६९॥
परिचय स्नेह अनुकम्प करि, अक्षीण राग पणेह ।
सराग भाव फुन लब्धि नूं, फोडववुं पिण लेह ॥२७०॥
प्रथम छट्ठा गुणठाणा ना, प्रगट भाव ए पेख ।
निर्वद्य किम कहियै तसु, न्याय विचारी देख ॥२७१॥
जेह कार्य नी केवली, आज्ञा न दिये कोय ।
धर्म पुण्य नहिं तेह में, हिये विमासी जोय ॥२७२॥
जेह कार्य नी केवली, आज्ञा देवे आप ।
धर्म पुण्य छै तेह में, तिहां नहिं किञ्चित पाप ॥२७३॥
केई जिन आज्ञा में पाप कहै, धर्म जिन आज्ञा बार ।
विहुं विध अशुद्ध प्ररूपवे, किम पामै भव पार ॥२७४॥
जिन धर्म जिन आज्ञा दिये, जिन धर्म सिखावे आप ।
जे धर्म कहै आज्ञा विना, ते कांवण प्ररूप्यो थाप ॥२७५॥
आज्ञा बारै धर्म रो, कवण धणी अवलोय ।
हाथ जोडि पूछ्यां थकां, कुण आज्ञा दे सोय ॥२७६॥
देव गुरू तो मौन रहै, नहिं अनुमोदै अंश मात ।
तो आज्ञा बाहिर धर्म रो, उत्पति रो कुण नाथ ॥२७७॥
संवर ने वलि निरजरा, दोय प्रकारे धर्म ।
जिन आज्ञा में ए बिहुं, ते थी शिवसुख पर्म ॥२७८॥

चर्म समय नं पाठ ए, खन्धक धन्नो आदि।
बहु मुनि नो समुच्चय कह्यो, तिम ए पिण संवाद ॥२५९॥
जङ्घा विद्या चारणा, तस्स ठाणस्स सोय।
आलोइय पडिक्कमिय, एहवो पाठ सुजोय ॥२६०॥
लब्धि फोड़ी ते स्थान प्रति, आलोवी गुणवन्त।
वलि पडिक्कमे ते मुनी, पद आराधक हुन्त ॥२६१॥
मुनी सुमङ्गल स्थान कि, तस्स ठाणस्स नांहि।
तिण सु' लब्धि फोड़ण तणो, दण्ड कह्यो नहिं ताहि ॥२६२॥
पिण नृप हय अरु सारथी, हणसे दण्डज तास।
तेह मुनी लेस्ये सही, कह्यु सव्वठ सिद्ध वास ॥२६३॥
इत्यादिक बहु ठाम छै, प्रायश्चित चाल्या नांहि।
पिण लिया हुस्ये मह्रा मुनी, गुणी देखोजो दिल मांहि॥२६४
तेजु लब्धि जो फोड़वे, तास क्रिया चण पञ्च।
केवल लह्यां कह्यो प्रभु, तिण सु' दण्ड सुसञ्च ॥२६५॥
कल्पातीत हुन्ता प्रभु, छै ए साचो वाण।
पिण किण गुणठाणे तिके, कहिये चतुर सुजाण ॥२६६॥
प्रभुजी चरित्त लियां पछी, श्रेणी चढ्या पहलांज।
सप्तम गुण छट्ठै वली, बे गुणठाण समाज ॥२६७॥
सप्तम गुणठाणा तणी, उत्कृष्टी अवलोय।
अन्तर महुरत स्थिति छै, छट्ठै बहु स्थित जोय ॥२६८॥

गुणवन्त री निन्दा कियां, कर्म तणुं बन्ध होय।
तेह कर्म थी दुःख लहै, नरक निगोदे सोय ॥२८८॥
तिण सुं हित शिक्षा भली, धारै सुगण सुजाण।
राग द्वेष छांडी करी, आराधै जिन आण ॥२८६॥

॥ कलश ॥

॥ चाल गीतक छन्द ॥

जिन वयण गुण मणी रयण सार उदार देखी संग्रह्या, अवि तथ्य पथ्य सु अर्थ जे मुझ ध्यासना में जिम कह्या। अति श्रेष्ट मिष्ट गरिष्ट प्रवर विशिष्ट जिन वच आद्यतं ॥ वच विरुद्ध को आयो हुवे मुझ तास मिथ्या दुःकृतं ॥ १ ॥ उगणीसे तेतीस वर्ष विद द्वादशी फागुण वही, वर शहर बीदासर विषे हद श्रमण एकावन सही। पुन अर्ज का बुकाशय तिहां गणी आण सम्प्रति शोभती। वर समय सार उदार निर्णय कीध जय जश गणपति ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

भिक्षू भारीमाल पुन, तृतीय पाट ऋषिराय।
तास पसाए सुगण वृद्धि, जय जश हर्ष सवाय ॥ १ ॥

दोय प्रकारे धर्म वलि, श्रुत फुन चरित पिछांण ।
जिन आज्ञा ए बिहुं विषे, समझो सुगण सुजांण ।२७९।
पञ्च महाव्रत साधुरा, श्रावक ना व्रत बार ।
जिन आज्ञा में ए बिहुं, आज्ञा बार असार ॥२८०॥
तिण सुं जिन आज्ञा तणी, राखो सुगण प्रतीत ।
धर्म जिन आज्ञा धारियो, ते गया जमारो जीत ॥२८१॥

॥ अथ हित शिक्षा ॥

दुःख बहु नरक निगोद ना; सह्या अनन्तो बार ।
धर्म जिन आज्ञा शिर धरै, हुवै तास निस्तार ॥२८२॥
मनुष जन्म दोहिलो लह्यो, लही सामग्री सार ।
पञ्च महाव्रत आदरी, आराध्यां भव पार ॥२८३॥
जो चरित धर्म ग्रही नहिं सकै, तो श्रावक ना व्रत बार ।
निर अतिचारे पालियां, पामै भव दधि पार ॥२८४॥
जो बार व्रत ग्रही न सकै, तो समदृष्ट उदार ।
देव गुरू धर्म ओलख्यां, सुख पामै श्रीकार ॥२८५॥
जो पूरी समझ पड़े नहीं, तो गुणवन्त रा गुण गाय ।
कोढ़ूक रसायण आवियां, पातिक दूर पुलाय ॥२८६॥
पोतै व्रत पालै नहीं, पालै ज्यासूं द्वेष ।
दोय सूखं तिण ने कह्यो, प्रथम आचारङ्ग देख ॥२८७॥

उत्तराध्ययन इकवीस में, समुद्रपाल सम्वेग।
पायो तस्कर देखने, देखो तज उद्वेग ॥ ५ ॥
सम्वेग पाठ तणो अर्थ, अविचूरि में ख्यात।
सम्वेग ना हेतु भणी, सम्वेग चोर कहात ॥ ६ ॥

॥ सूत्र गाथा ॥

तं पसि ऊणं सम्वेगं, समुद्दपालो इण मव्वी, अहो असुहाण कम्माणं, निज्झाणं पावगं इमं ॥ उत्तराध्ययन २१ वें गाथा ९ मी ॥

॥ अत्र अविचूरी ॥

तमिति तथा विध द्रव्यं दृष्ट्वा संवेग संसार वैमुख्यतो मुक्त्य ऽभिलाषस्तद्धेतुत्वात्सोपि संवेगस्तं समुद्रपाल इदं वक्ष्मार्णं अब्रवीत् यथा अशुभानां पापकानां कर्मणा मनुष्ठानानां निर्यानं अवसानं पापकं अशुभं इदं प्रत्यक्ष असौवराको वद्धार्थ मित्यंनीय ते इति भावः।

॥ वार्त्तिका ॥

इहां कह्यो तं कहतां ते, तथा विध द्रव्य देखी ने सम्वेग ते संसार विमुखपणो मुक्तिनी अभिलाषा ते सम्वेग नां हेतु पणा थकी, सोपि कहतां तिको चोर पिण सम्वेग, जिम पापकारी कर्म्म ते अनुष्ठान ना छेहड़े अशुभ ए प्रत्यक्ष रांक वध ने अर्थे इह विध लेजाय छे, एटले सम्वेग नो हेतु चोर ते देखी ने समुद्रपाल बोल्यो अशुभ कर्म्म ना फल ए भोगावे छे।

॥ दोहा ॥

सम्वेग नो हेतु कह्यो, तसकर ने अवलोय।
पिण गुण नहिं छै ते भणी, वन्दन योग न कोय ॥ ७ ॥

तिण काले भिक्खू गणे, मुनिवर सित्तर दोय।
इक सह तागु पर्जका, गणी आणा अवलोय ॥ २ ॥
उत्तर तुम्हे मंगाविया, हमे लिखाव्या नांय।
ते माटे ए प्रश्न ना, उत्तर दोहा वणाय ॥ ३ ॥
दोहा ग्रहस्थ कंठे करी, निज मति थकी लिखेह।
तिणे खोट ज्यो को लिखी, तो मुझ दोषण मत देह ॥४॥

॥ इति गोशालाधिकार ॥

॥ अथ छब्बीसमूं प्रतिमा वैराग्य नो हेतु कहे तेहनुं उत्तर ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे वैराग्य नो, हेतु प्रतिमा एह।
जिन प्रतिमा देखी करी, वर वैराग्य लहेह ॥ १ ॥
ते माटे वन्दनीक है, जिन प्रतिमा जग मांय।
हिव तेहनुं उत्तर कहूं, सांभल जो चित्तलाय ॥ २ ॥
वृषभ देख प्रति वूझियो, कर कंडू नरराय।
दु मुह इन्द्रध्वज स्थम्ब प्रति, देख संवेग सुपाय॥ ३ ॥
चूडि सूं प्रति वूझियो, नमि नृपति तिह काल।
अम्ब देख प्रति वूझियो. नगई नाम भूपाल ॥ ४ ॥

द्वेष तणा हेतु प्रभु, पिण ते गुणा सहीत।
तिण सुं ते निन्दनीक नहिं, देखोजी धर प्रीत ॥१८॥
वस्तु जे गुण सहित प्रति, देखी द्वेष लहेह।
द्वेष तणो हेतु तिका, पिण निन्दनीक नहिं जेह ॥१६॥
वस्तु जे गुण हीण प्रति, देखि संवेग लहेह।
संवेग नो हेतु तिका, पिण वन्दनीक नहिं तेह ॥२०॥

॥ अथ सत्तावीसम् ब्राह्मी लिपि अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे पञ्च पञ्चमें, ब्राह्मी नी लिपि सार।
नमस्कार तेहने कर्युं, हिव तसु उत्तर धार ॥ १ ॥
नमो बंभीए लिवी ए, लिपि कर्त्ता नाभेय।
चरण सहित जिन धुलिपिक, अर्थ धर्मसी एह ॥ २ ॥
पाथा ना कर्त्ता भणी, पाथो कहिए ताहि।
एवं भूत नयने मते, अनुयोग द्वार रे मांहि ॥ ३ ॥
अथवा लिपि जे भाव लिपि, जे मुनि ने आधार।
नमस्कार छे तेहने, एहवुं दीसे सार ॥ ४ ॥
तीर्थ नाम जिम सूत्र नूं, ते संघ ने आधार।
तिण सुं सङ्घ ने तीर्थ कह्युं, तिमभावे लिपि सार ॥ ५ ॥

वृषभादिक देखी करी, कर कंडू आदेह ।
बूझ्या पिण वृषभादि ते, वन्दनीक न कहेह ॥ ८ ॥
मुनि वेषे जे पासत्थो, तसु देखी ने सोय ।
वैराग पावे पिण तिको, वन्दन योग न कोय ॥ ६ ॥
तिम जिन प्रतिमा देखने, पावे जे वैराग ।
पिण ते वन्दन योग नहीं, देखो मत पक्ष त्याग ॥१०॥
ज्ञान दर्शन चारित तणा, गुण नहिं छै जे मांय ।
ते सम्बेग नो हेतु हुवे, पिण वन्दनीक नहिं थाय ॥११॥
मुनिवर प्रति देखी करी, द्वेष धरे मन कोय ।
द्वेष तणो हेतु मुनी, पिण निन्दनीक नहिं होय ।१२।
सर्वानु भूत्ति मुनि तणा, वचन सुणी गोशाल ।
कोप्यो शीघ्र उवावलो, भस्म कियो तेह काल ॥१३॥
कोप तणो हेतु मुनी, पिण गुण सहित सुसन्त ॥
ते माटे निन्दनीक नहीं, देखोजी बुद्धिवन्त ॥१४॥
सुनक्षत्र ना वचन सुणि, धर्‌युं गोशाले द्वेष ।
द्वेष तणो हेतु तिको, पिण निन्दनीक नहिं पेख ॥१५॥
वीर प्रभूना वचन सुणि, कोप्यो शीघ्र गोशाल ।
कोप तणा हेतु प्रभू, पिण निन्दनीक मत न्हाल ॥१६॥
छद्म वीर प्रति देखि ने, जन बहु द्वेष धरेह ।
दुःख दीधा अति आकरा, आख्यो धुर अङ्गेह ॥१७॥

वैद्क विकथा वारता, मन्त्र जन्त्र फुन तन्त्र ।
कोक सामुद्रिक शास्त्र ए, लिपि में सहु आवन्त ॥१६॥
पाप शास्त्र गुणतीस फुन. वर्ण स्थापना पेख ।
ए अठारै लिपि विषे, वन्दनीक तुभ लेख ॥१७॥
वीतराग तो तेहने, पाप शास्त्र आख्यात ।
द्रव्य लिपि कहिए तेहने, वन्दनीक किम थात ॥१८॥
जो वन्दनीक द्रव्य लिपि हुवे. द्रव्य लिपि कही अठार ।
तेह विषे सहु आविया, किम वन्दे अणगार ॥१९॥
ते माटे ते भाव लिपि, वा कारता नाभेय ।
ऋषभ चर्ण गुणयुक्त ने, नमस्कार सुगुणेह ॥२०॥

॥ वार्त्तिका ॥

कोई कहे भगवती रै आदि में णमोवंभीए लिविए । ए शब्द कही पछे कह्यो णमो सुयस्स ते लिपि ने नमस्कार करी सूत्र ने नमस्कार कस्युं ते भाव श्रुत ने नमस्कार क्ये छतै ते भाव सूत्र ने विषे भावलिपी पिण आय गई तो पूर्वे भाव लिपी ने नमस्कार किधो तेहनुं स्युं कारण नमोवंभीए लिविए अनें नमो सुयस्स ए बे पद किम कह्या तेहनु उत्तर ॥ दशवैकालिक अध्ययन आठमें गाथा ४१ मी में कह्यो कुम्मुवं अल्लिण पल्लिण गुत्तो, काछवा नी परै, अल्लीण ते इषत् गुप्त पल्लिण ते प्रकृष्ट लीन घणो गुप्त इहाँ बे पद कह्या तथा दशवैकालिक अध्ययन चौथे कह्यो पृथ्वीकाय ऊपर न लिहेज्झा कहितां थोड़ोसो अथवा एक वार लिखै नहीं, न विलिहेज्झा कहतां बहुवार लिखै नहीं इहाँ पिण बे पद कह्या, तथा उत्तराध्ययन पहले आलवंते लवंते वा न सिएज्झ कयाइवि गुरुई, आलवंते कहतां एकवार बोलाव्यो वा ते अथवा लवंते

वृत्तिकार द्रव्य लिपि कही, तेह लिपि गुण सून्य ।
नमस्कार तेहने करेइं, ते तो बात जवुन्य ॥ ६ ॥
द्रव्य निक्षेपो गुण रहित, वन्दन जोग्य न ताम ।
समवायङ्ग देखल्यो, द्रव्य भाव जिन नाम ॥ ७ ॥
भरत एरवत खेत ना, अनागते जिन नाम ।
समचे चौबीस नाम जिन, वन्दे पाठ न ताम ॥ ८ ॥
वले एरवत खेत नी, चउबीसो वर्त्तमान ।
ठाम ठाम वन्दे कह्युं, ए गुन सहित सुजान ॥ ९ ॥
वर्त्तमान चउबीस ए, भरत खेत नी ताहि ।
ठाम ठाम वन्दे कह्यो, जोवो लोगस्स मांहि ॥१०॥
ते लेखे द्रव्य लिपि भणी, द्रव्य सूत ने सोय ।
नमस्कार किम कीजिये, हिये विमासी जोय ॥११॥
वृत्तिकार द्रव्य लिपि भणी, थाप्यो छे नमस्कार ।
सूत थकी मिलतो नथी, एह अर्थ अवधार ॥१२॥
तथा पत्र में जे लिख्या, अक्षर ना आकार ।
वन्दनीक जो ते हुवे, तो लिपि अष्टादश धार ॥१३॥
अष्टादश लिपि ने विषे, वेद पुराण संपेख ।
कुरान जोतिष पिण हुवे, वन्दनीक तुझ लेख ॥१४॥
अष्टादश लिपि ने विषे, वर्ण संज्ञा संपेख ।
सहु पुस्तक में जे लिख्या, वन्दनीक तुझ लेख ॥१५॥

कहतां बार बार बोलाव्यो नं० शिष्य बैठो रहै नहीं कदाचित पिण इहां पिण वे पद कह्या, तथा उत्तराध्ययन इग्यारमें नासीले कहितां सर्वथा चारित्र नी विराधना नथी विसीले कहतां थकी चारित्र नी विराधना नथी इहां पिण देश अने सर्व ए वे पद कह्या, तथा बृहत्कल्पउद्देशै तीसरै अन्तर घरने विषै साधू ने न कल्पै निद्रा इत्तएवा कहिता थोडी नींद लेवी पयला इत्तएवा कहितां विशेष ऊंघवो इहां पिण ये पद कह्या, इत्यादिक अनेक ठामें ये पद कह्या तिम इहां पिण वे पद जाणवा लिपि शब्दे भाव लिपि ते देश थकी श्रुत ज्ञान अने नमो सुयस्स ते सर्व श्रुत ज्ञान कह्यो तथा लिपिना करता ऋषभदेव ने लिपिक कहिए ते चारित्र युक्त प्रथम जिनने नमस्कार।

॥ अत्र टीका ॥

अयं च प्राग् वाख्याता नमस्कारादिकाग्रन्थ वृति कृत्ता न व्याख्यातो कुतोप कारणा दिति, ए भगवती नी वृत्ति मे अभय देव सूरे कह्यो।

॥ सोरठा ॥

नमस्कारादिक ताहि रे, रचना पूवँ कही जिका।
मूल वृत्ति रै मांहि रे, न कही किण कारण तिका।१।
इम कह्यो वृत्तिकार रे, ते माटे शिव तेहनुं।
प्रवर न्याय जे सार रे, बुद्धिवन्त हिये विचारज्यो ॥२॥

॥ इति ॥ श्रीमद् जयाचार्य्य कृत हित शिक्षावली प्रश्नोत्तर तत्वबोध ॥

